प्रकरण चौबीस

नई जगन्नाथ पुरी

श्रील प्रभुपाद ने गले तक जर्सी के ऊपर एक स्वेटर पहना, एक चादर कंधों के चारों ओर लपेट ली और कुछ शिष्यों के साथ वे अपने कमरे से चल पड़े। मौसम सुहावना था और नीले मेघशून्य आकाश से उन्हें भारत की याद आई। एक घंटा पहले उन्होंने कुछ भक्तों को कीर्तन आरम्भ करने के लिए आगे भेजा था और अब एक लड़की दौड़ती हुई उनके पास वापस आ गई थी। आवेशपूर्वक उनका दरवाजा खटखटाते हुए वह बोली, "स्वामीजी, वहाँ बहुत सारे लोग हैं।"

कुछ मिट्टी के मृदंग, जो उन्होंने कई महीने पहले कलकत्ता से मंगाए थे हाल में ही पहुंचे थे। आज पहला अवसर होगा जब वे अमेरिका में मिट्टी के असली मृदंगों को बजायेंगे, जिन्हें उन्होंने कपड़े में लपेटवा दिया था। उन्होंने लड़कों को आगाह कर दिया था कि वे सावधान रहें, क्योंकि मिट्टी के मृदंग जल्दी टूट जाते हैं।

पार्क थोड़ी दूरी पर था और आदत के अनुसार प्रभुपाद अपने युवा अनुगामियों से तेज चल रहे थे; वे फ्रेडरिक स्ट्रीट पार करके स्टानियन पहुँचे, जहाँ मालपुए की दुकान की नुक्कड़ से वे मुड़े। (यह वही दुकान थी, जहाँ हेल्स ऐंजल्स बहुत बार आते थे और जहाँ कुछ भक्त अब भी कभी-कभी जाया करते थे।) स्टानियन से आगे केजर स्टेडियम के कार-पार्क से वे शीघ्रतापूर्वक आगे बढ़े; स्टेडियम आगे दिखाई दे रहा था। वालेन स्ट्रीट के चौराहे पर प्रभुपाद की गति वैसी ही तेज थी। वे तनिक भी रुके नहीं और ट्रेफिक लाइट की ओर देखने की भी परवाह उन्होंने नहीं की। एक लड़के ने उनकी बाँह पकड़ ली, "ठहरिए, स्वामीजी—लाइट," किन्तु स्वामीजी ने तेजी से सड़क पार कर ली।

जब वे स्टानियन से हैट स्ट्रीट की ओर बढ़ रहे थे, तब पार्क दाईं ओर आया। वे बत्तखों के एक तालाब को पार करते हुए पार्क में प्रविष्ट हुए। तालाब में एक फौवारा था और उसके बीच के टापू पर बेंत का एक पेड़ लगा था। वे लम्बे रेडवुड और यूकेलिप्टस के पेड़ों से आगे बढ़े, जो आसपास के वातावरण को सुगंध से भर रहे थे। वहाँ द्रिफल, बांज, ऐश के भी पेड़ थे और झाड़ियाँ थीं, जो फूल रही थीं। प्रभुपाद ने कहा कि यह पार्क

बम्बई के पार्कों से मिलता-जुलता है और नगर एक पवित्र स्थान के समान है, क्योंकि उसका नाम सेंट फ्रांसिस के नाम पर रखा गया है।

वे एक पचास फुट लम्बी सुरंग में प्रविष्ट हुए, जिसमें छत से हिमलुंबियाँ लटक रही थीं और बाहर एक ऐसे मार्ग पर पहुँचे, जिसकी दोनों ओर घने छायादार पेड़ थे। ठीक सामने घास का मैदान था, जो छोटे-छोटे डेजी और तिपतिया चारे के पौधों से ढका था और किनारे पर रेडवुड और यूकेलिप्टस के वृक्षों से घिरा था। प्रभुपाद को कीर्तन, करताल और टिंपनी की ध्वनियाँ सुनाई देने लगी थीं। जब वे घास के मैदान में प्रविष्ट हुए, तो उन्होंने एक ढालू पहाड़ी देखी, जो सैकड़ों युवा-युवतियों से भरी थी—कुछ बैठे थे, कुछ लेटे थे, कुछ सुस्ता रहे थे, कुछ सिगरेट पी रहे थे, कुछ फ्रिजबी खेल रहे थे और कुछ मैदान के चारों ओर घूम रहे थे। और पहाड़ी के नीचे मैदान में उनका कीर्तन चल रहा था।

घास का मैदान सर्व-प्रिय स्थान था। लोग चिड़िया-घर या टेनिस कोर्ट जाते हुए इसमें से गुजरते थे। किन्तु आज बहुत से पथिक वहाँ रुक गए थे और समूह बनाकर लगभग २०० फुट की दूरी से कीर्तन सुन रहे थे। और नजदीक, कीर्तन से करीब ५० फुट दूर एक दूसरा समूह था, जो अधिक ध्यान से सुन रहा था। तब स्वयं कीर्तन-मंडली थी। वे प्रभुपाद के शिष्य और दर्जनों की संख्या में युवा हिप्पी थे, जो एक-दूसरे से सटकर बैठे हुए कीर्तन कर रहे थे। और अन्य लोग पास में खड़े ताली बजा रहे थे और ढोलक और करतालों की ताल के साथ झूम रहे थे।

कीर्तन के क्षेत्र में पताकाएँ लगी थीं। चार फुट लम्बी, तीन फुट चौड़ी ये पताकाएँ भक्तों द्वारा बनाई गई थीं और उन पर भिन्न भिन्न धर्मों के चिह्न बने थे। एक चमकदार लाल रंग की पताका, जिसमें एक पीले तारे और इस्लाम के अर्द्धचन्द्र का चिह्न था, जमीन में गड़े दस फुट बांस से लहरा रही थी। उसकी बगल में एक पीले नीले रंग की पताका फहरा रही थी, जिसके मध्य में गहरे नीले रंग का स्टार आफ डेविड अंकित था। और उसकी बगल में एक और पीले रंग की पताका थी, जिस पर संस्कृत में ॐकार लिखा था।

प्रभुपाद के शिष्य लम्बे बाल रखे थे और सामान्य वस्त्र धारण किए थे। जप करने की अपनी लम्बी लाल माला के अतिरिक्त, जो वे गले में पहने थे, उनमें कोई अन्य युवा नर्तकों और गायकों से भिन्नता न थी। कुछ भक्त अविरल नीले आकाश की ओर बाहें उठाए नाच रहे थे। अन्य भक्त साज बजा रहे थे। करताल और टिम्पनी बज रहे थे; हयग्रीव अपनी तुरही लाया था और अन्य भक्त और हिप्पी दूसरे साज भी लाए थे। छोटे बच्चे भी भाग ले रहे थे। एक भटका हुआ कुत्ता भी कीर्तनियों के ऐन मध्य में नाच-कूद रहा था। रविवारों को हिप्पी हिल के नीचे का मैदान हमेशा खुले प्रेक्षा-गृह में बदल जाता था और आज कीर्तन उसका विशिष्ट आकर्षण था।

प्रभुपाद कीर्तन में शामिल हो गए। उनके अचानक पहुँचने से भक्त-मण्डली आश्चर्य और प्रसन्नता से भर उठी। वे बैठ गए और मृदंग बजाते हुए ऊँचे स्वर में गवैयों का नेतृत्व करने लगे।

मुकुंद : *यद्यपि हम लोगों ने स्वामीजी को विभिन्न मृदंग बजाते हुए पहले सुना था और हम में से बहुतों ने उनके साथ मृदंग बजाया था, पर जब उन्होंने भारत से मँगाया गया मिट्टी का मृदंग बजाया, तो उससे बिल्कुल ही भिन्न प्रकार का भाव उत्पन्न हुआ। जो भाव इससे उत्पन्न हुआ, वह ऐसा था मानो हम किसी पुराने मित्र को सालों बाद देख रहे हों। स्वामीजी का मृदंग बजाना कितना ठीक, कितना स्वाभाविक लग रहा था! हमारे कीर्तनों में इसका अभाव खल रहा था और उसके होने से हमारी प्रसन्नता में कई गुना वृद्धि हो गई थी। स्पष्ट था कि स्वामीजी भी पहले से कहीं अधिक आनन्दित थे। जिस ढंग से वे मृदंग सँभाल रहे थे और जिस सहजता से कीर्तन को नियंत्रित करने वाली सूक्ष्म लय निकाल रहे थे, उससे मालूम होता था कि मानो यह मृदंग उनका बहुत पुराना और अब तक खोया हुआ मित्र था। स्वामीजी का वह मृदंग बजाना समुदाय में चर्चा का विषय बन गया। अब हम ने जाना कि कीर्तन सचमुच क्या होता है, इससे कैसी ध्वनि निकलनी चाहिए, यह वस्तुतः किस तरह का होना चाहिए।*

प्रभुपाद आकर्षण का केन्द्र बन गये। उनकी अवस्था और वेशभूषा तक ने उन्हें प्रमुखता प्रदान की। जबकि पार्क में अधिकतर लोग युवा थे और वे डेनिम के या तरह-तरह के हिप्पी पहनावे पहने हुए थे, प्रभुपाद सत्तर वर्ष के थे और केसरिया वस्त्र धारण किए थे। और जिस प्रकार भक्तों ने हर्ष-ध्वनियाँ कीं और नतमस्तक होकर उनका अभिनंदन किया और जिस प्रकार से प्रेमपूर्वक अब उन्हें देख रहे थे, उससे दर्शक उन्हें कौतूहल और सम्मान के साथ देखने को उत्प्रेरित हुए। ज्योंही वे बैठे, बहुत से बच्चे उनके निकट सिमट आए। कुशलतापूर्वक मृदंग बजाते हुए, बच्चों का मनोरंजन करते हुए और उन्हें प्रसन्नता से भरते हुए प्रभुपाद उनकी ओर देखकर मुसकरा रहे थे।

गोविन्द दासी : *स्वामीजी के वहाँ पहुँच जाने से सारा कीर्तन उस प्रभुत्व और अधिकार से समन्वित हो गया, जिस का पहले अभाव था। अब सैन फ्रांसिस्को में हरे कृष्ण गाने वाले हम बच्चे नहीं थे। हमने अब ऐतिहासिक गहराई और अर्थवत्ता प्राप्त कर ली थी। कीर्तन को अब प्रत्यय-पत्र मिल गया था। स्वामीजी की उपस्थिति से जप की प्राचीन ऐतिहासिक विशिष्टता स्थापित हो गई। स्वामीजी के आने से सम्पूर्ण गुरु-परम्परा का आगमन हो गया था।*

एक घंटे के बाद स्वामीजी ने कीर्तन बन्द कर दिया और उन्होंने एकत्रित जन-समूह को सम्बोधित किया : "हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम

राम, हरे हरे। यह ध्वनि तरंग है और यह समझने की बात है कि यह ध्वनि तरंग दिव्य है। दिव्य होने के कारण यह ध्वनि तरंग उन लोगों को भी प्रभावित करती है, जो इस ध्वनि की भाषा नहीं समझते। यही इसकी सुन्दरता है। बच्चे तक इसके प्रति अपनी अनुक्रिया प्रकट करते हैं..."

पाँच मिनट बोलने के बाद प्रभुपाद ने कीर्तन फिर शुरू किया। लम्बे, लाल, बिना कंघी किए बालों वाली एक महिला, जिसकी गोद में बच्चा था, घूम-घूमकर नाचने और गाने लगी। अगल-बगल बैठे एक पुरुष और महिला बोंगो का एक जोड़ा साथ-साथ बजाने लगे। सुबाला, जो संकरे कार्ड्राय की पतलून और ढीली श्वेत कमीज पहने थी, स्वामीजी द्वारा सिखाए गए पद-विन्यास के साथ नाचने लगी, यद्यपि वह कुछ अमेरिकन इंडियन नर्तकी जैसी लगती थी। एक छोटी लड़की, जो चार वर्ष से अधिक की नहीं थी, पालथी मारे बैठी थी और गम्भीरतापूर्वक कीर्तन करती हुई करताल बजा रही थी। एक सौम्य व्यक्ति, वास्कट पहने और धूप के गोल चश्में लगाए, हथेली से करताल बजा रहा था। रवीन्द्र स्वरूप हारमोनियम बजाता हुआ आगे-पीछे झूम रहा था। उसकी बगल मैं बैठा हयग्रीव उत्साहपूर्वक कीर्तन में लीन था; उसका सिर और शरीर का ऊपरी भाग आगे-पीछे झूम रहे थे; उसके सिर और दाढ़ी के लम्बे बाल बिखरे हुए फहरा रहे थे। पास में ही एक लड़की खड़ी थी जो दाईं बाँह एक लड़के पर और बाईं बाँह दूसरे लड़के पर रखे थी। वे तीनों शान्त और भावविभोर मुसकान के साथ आगे-पीछे झूमकर गा रहे थे और कीर्तन एवं धुन का आनन्द ले रहे थे। एक लड़की शान्त भाव से ध्यान-मग्न थी, जबकि उसकी बगल में दूसरी लड़की उत्तेजक ढंग से नाच रही थी और नाचनेवाली लड़की की बगल में एक पाँच वर्ष का बच्चा दो गुब्बारों से खेल रहा था।

प्रभुपाद ने मृदंग अलग रख दिया और वे उठ खड़े हुए। करताल बजाते हुए वे नर्तकों के बीच, राजसी पद-विन्यास के साथ झूमने लगे। पास में ही एक विशाल अश्वेत व्यक्ति नाच रहा था; उसका मुँह उसकी मित्र गोरी लड़की की ओर था। दोनों की गति ऐसी थी, मानो वे एवलान में हों। लड़की अपने शरीर और सिर को उत्तेजित स्वच्छन्द भाव से हिला रही थी। उसके लम्बे सीधे बाल उसके मुख को पूरी तरह ढक रहे थे। प्रफुल्लित, गोरी नन्दराणी प्रभुपाद के दाएं खड़ी करताल बजा रही थी। कभी-कभी प्रभुपाद गाना बन्द कर देते और दृश्य का केवल अवलोकन करने लगते; उनका बन्द मुख दृढ़ किन्तु उदात्त, सहिष्णु अभिव्यक्ति से रंजित होता।

कुछ युवकों ने एक-दूसरे से अपने हाथों को मिलाकर एक वृत्त बना लिया और स्वामीजी के सामने वे गोलाकार में नाचने लगे। तब उन्होंने उनको घेर लिया; स्वामीजी उन्हें देखते रहे; झूमते हुए वे अब भी गम्भीरता से तालियाँ बजा रहे थे। वे एक दूसरे का

हाथ पकड़े उनके इर्दगिर्द नाच रहे थे, अपने अंगों को मरोड़ रहे थे और हरे कृष्ण गा रहे थे। हिप्पियों के मिले-जुले पहनावे से भिन्न, अपनी हल्के केसरिया रंग की खादी वेशभूषा में स्वामीजी असाधारण और अद्‌भुत लग रहे थे। कीर्तन की प्रस्तुति का गम्भीरतापूर्वक अनुमोदन करते हुए वे जो कुछ हो रहा था, देख रहे थे।

नृत्य स्वच्छन्द और कामुक था। किन्तु यही तरीका था, जिससे ये युवक अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करते थे—अपने शरीर के अंगों द्वारा। वे हवा में उछल-कूद करते थे। कभी कभी नर्तकों का वृत्त टूट जाता था और वे एक पंक्ति में हो जाते थे, तब वे घास पर बैठे लोगों और रेशमी पताकाओं के आगे-पीछे नाचने लगते। एक हृष्ट-पुष्ट लड़के ने एक लड़की का हाथ पकड़ लिया, जो लम्बे काले बालों की लटें रखे थी और जो अमरीकी इंडियन ढंग से सिर के चारों ओर काली पट्टी बाँधे थी। पंक्ति के अन्त में एक लड़के ने अपने बाएं हाथ से एक लड़की का हाथ पकड़ा और दाएं हाथ से एक लकड़ी का बाजा अपने मुंह को लगाया और भीड़ के चारों ओर नाचता हुआ वह बाजा बजाने लगा।

प्रभुपाद थक गए थे और पीतल के पेंदे वाली टिम्पनी की बगल में बैठ गए। करताल बजाते और गाते हुए वे किसी प्राचीन ऋषि की भाँति गम्भीर रूप से सीधे बैठे थे। पास में ही एक गोरे रंग की महिला योग की मुद्रा में बैठी थी; वह आगे की ओर इतनी झुकी हुई थी कि वह अपने माथे से जमीन को बार बार छूती थी, अभ्यर्थना या सम्मानप्रदर्शन के लिए। एक दूसरी लड़की प्रार्थना में दोनों हाथ फैलाए थी—शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों भावों की अभिव्यक्ति करती हुई। उसके दोनों कानों में सोने के कर्णफूल हिल रहे थे। एक मेक्सिको-निवासी पुरुष, जो कई रंगोंवाली कमीज पहने था, ढोलक बजा रहा था। भेड़ की रखवाली करने वाला एक सफेद कुत्ता व्यक्तियों के चारों ओर घूम रहा था।

स्वामीजी दयालु और प्रसन्न दिखाई दे रहे थे। हिप्पियों को वे सुन्दर लग रहे थे। अपने अंगों को मरोड़ते, हिलाते, उछलते-कूदते और नाचते हुए युवा लोगों के बीच स्वामीजी शिष्ट और तटस्थ बने रहे। उनकी अत्यधिक कामुक गतिविधियों में वे उनसे अलग रहे, क्योंकि उनकी गतिविधि राजसी और वृद्धों की-सी थी।

मैदान पर चलने वाले कार्यकलापों में नर्तकों को अपनी चारों ओर घेरा बनाकर नाचते और हरे कृष्ण गाते देखकर स्वामीजी बहुत प्रसन्न हुए। यद्यपि इन हिप्पियों का उत्साह अधिकतर स्वच्छन्दतापूर्ण और कामुक था, तथापि इन्हों ने हरे कृष्ण कीर्तन के कारण संपूर्ण मधुरता का रूप धारण कर लिया था। स्वामीजी के लिए यह बहुत बड़ी बात भी कि कीर्तन का कार्यक्रम बराबर चल रहा था। स्वामीजी केसरिया वस्त्र पहने हुए थे, जिसका रंग अपराह्न के ढलते प्रकाश में बदलता-सा प्रतीत होता था। वे पिता की भाँति कृपापूर्वक

जो कुछ हो रहा था उसे देख रहे थे, किसी पर कोई अंकुश नहीं लगा रहे थे, वरन् हर एक को हरे कृष्ण कीर्तन के लिए आंमत्रित कर रहे थे।

• • •

पच्चीस वर्षीया लिंडा काट्ज पार्क में से होकर जा रही थी कि उसने कीर्तन की ध्वनि सुनी। सैकड़ों लोगों की भीड़ में, जो वहाँ जमी थी, लिंडा के लिए आसान था कि अप्रकट रूप में वह निकट पहुँच जाये। उसे वहाँ का कार्यकलाप सुखकर लगा और वह इस समारोह में शामिल होने का विचार भी करने लगी। तब उसने स्वामीजी को कीर्तन का नेतृत्व करते देखा। वह चौंक गई, उसे कुछ डर भी हुआ; उसने ऐसा गम्भीर व्यक्ति पहले कभी नहीं देखा था। उसे वे बड़े प्रभावशाली लगे।

और नर्तक उसे सुन्दर लगे। एक लड़की बाहें ऊपर उठाए और आँखें बन्द किए हुए हवा में हिलते वृक्ष की तरह लग रही थी। पुरुषों में से एक पुरुष लम्बा और आकर्षक था; उसके बाल सुनहरे और घुँघराले थे। और लिंडा ने एक लड़के को देखा, जिसे वह न्यूयार्क में कालेज के दिनों से जानती थी। वह लड़का सनकी था और हमेशा गहरे गुलाबी रंग की ऊनी टोपी पहनता था।

लिंडा न्यूयार्क से सैन फ्रांसिस्को में कुछ ही दिन पहले आई थी। लिंडा के पास कोई योजना नहीं थी, सिवाए इसके कि वह किसी शिक्षक से नृत्य सीखना चाहती थी और उन बहुत-सी उन्मेषकारी चीजों में से किसी एक में शामिल होना चाहती थी, जिनके बारे में उसने सुना था कि वे हैट ऐशबरी में चल रही हैं। कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्राचीन ग्रीक साहित्य की स्नातक छात्रा के रूप में लिंडा को सुकरात के प्रति आकर्षण हुआ था, जो सत्य के लिए जिया और मरा था, लेकिन उसने अपने प्रोफेसरों में से किसी को भी सुकरात की भाँति बिल्कुल नहीं पाया था। उसने अपने बारे में कल्पना की थी कि वह सत्य का जीवन जिएगी और ज्ञान का अन्वेषण करेगी। लेकिन वह शुष्क हो चुका था। ग्रीक की प्राचीन सभ्यता मर चुकी थी; वह एक जीवित सत्य नहीं रह गई थी और हृदय को प्रभावित नहीं करती थी।

वह एक नए, उन्मेषकारी अनुभव के लिए बेचैन थी और तैयार थी अपने आपको सैन फ्रांसिस्को के हिप्पी संघ में डाल देने के लिए। फैशन वाली वेश-भूषा को पीछे छोड़कर, बेल-बोटम पतलून और पुरानी कमीज पहनकर वह यहाँ अकेली आई थी। पर चूँकि वह गम्भीर जीवन अपनाना चाहती थी, इसलिए हिप्पियों का साथ करने में उसे अजीब बेढंगापन मालूम होता था। उसे लगा कि उनकी संगति में रहते का मतलब था, चेहरे से गम्भीरता को उतार फेंकना और बिना मतलब मुसकराते रहना। इसलिए सैन फ्रांसिस्को के हिप्पी-समाज में भी वह असन्तुष्ट और खोई-सी अनुभव करने लगी।

पार्क में हो रहा कीर्तन लिंडा के जीवन का सबसे सुन्दर दृश्य था। नर्तक खुले आकाश में बाँहें फैलाए आगे-पीछे झूमते हुए नाच रहे थे और नृत्य के बीच एक साँवला, पके बालों वाला व्यक्ति बैठा था और कीर्तन कर रहा था। जब लिंडा और नजदीक पहुँच गई तो वह भक्तों के साथ नाचने लगी। तब वह बैठ गई और यह जानने की इच्छा रखते हुए कीर्तन करने लगी कि वहाँ यह सब क्या हो रहा है।

एक घंटे के कीर्तन के बाद वयोवृद्ध व्यक्ति ने कीर्तन बन्द कर दिया और लिंडा कुछ भक्तों से बात करने लगी। यद्यपि स्वामीजी वहाँ से चले गए थे, उनके कुछ अनुयायी पीछे रह गए थे। वे संडे लव फीस्ट (रविवारीय प्रेम भोजन) के लिए इशतिहार और निमंत्रण पत्र बाँट रहे थे और पताकाएँ और टिपनी समेट रहे थे। उनमें से एक ने लिंडा को अपने साथ मन्दिर में आने के लिए कहा।

लिंडा ने देखा कि स्वामीजी के अनुयायियों में से अधिकतर हिप्पी थे, परन्तु वे सड़कों में घूमने वाले उन ऊल-जलूल लोगों की तरह नहीं थे, जैसाकि बहुत से हिप्पियों को उसने पाया था। वे आकर्षक थे, घृणा पैदा करने वाले नहीं थे। उन्होंने अपने स्टोरफ्रंट के छोटे से मन्दिर को मद्रासी कपड़ों और पौधों से सजाया हुआ था। जब वह गाते-नाचते जन-समुदाय के एक चित्र के सामने खड़ी हो गई, तो भक्तों में से एक ने कहा—"ये भगवान् चैतन्य और उनके संगी हैं।" एक भक्त ने उसे कुछ प्रसाद दिया और लिंडा उस रात स्वामीजी से मिले बिना चली गई।

परन्तु उनको दूसरी बार देखने का अवसर पाने की उत्सुकता लिए दूसरे दिन सवेरे सात बजे वह फिर आई। वह सोचती थी कि उन्होंने उसे पार्क में देखा था और हो सकता है कि वह उन्हें याद हो। उसने उनका एक चित्र बनाया था और उसे वह उन्हें दिखाना चाहती थी।

उस सवेरे जब प्रभुपाद जप करते हुए कीर्तन करा रहे थे, तो लिंडा ने उन पर से दृष्टि नहीं हटाई। और जब उन्होंने हर एक से माला फेरते हुए हरे कृष्ण का जप करने को कहा, तो लिंडा ने एक भक्त से माला ली और स्वामीजी की तरह जप करने का प्रयत्न किया। तब उन्होंने अपना व्याख्यान आरम्भ करने के लिए एक संस्कृत का श्लोक पढ़ना शुरू किया और उसकी ध्वनि से लिंडा मोहित हो गई। उसने निश्चय किया कि यदि वह स्नातक की पढ़ाई ग्रीक भाषा से करती है, तो उसके बाद वह संस्कृत पढ़ेगी। इसलिए वह ध्यान से सुनने लगी—इस गर्व से भरकर कि उसकी तरह अन्य कोई भी इसे नहीं समझ रहा था।

बाद में उसी सवेरे वह प्रभुपाद से उनके ऊपर के कमरे में मिली।

लिंडा : *स्वामीजी के साथ पहले ही वार्तालाप में उन्होंने मेरे लिए यूनानी सभ्यता का सारांश कुछ वाक्यों में रख दिया। उन्होंने बताया कि इलियड और ओडिसी जैसी कथाओं*

और प्लेटो के दर्शन का स्रोत श्रीमद्भागवत् था। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैंने उन पर विश्वास किया। मैं जानती थी कि वे जो कुछ कह रहे थे, वह सही था। मेरे मन में सन्देह नहीं था। और सुकरात के प्रति जो मुझे प्रेम था, उससे उन्होंने मुझे निरुत्साहित नहीं किया। उन्होंने बताया कि सुकरात वास्तव में एक प्रच्छन्न भक्त था।

तब वे माखनचोर के रूप में मुझे कृष्ण की कहानी बताने लगे। मैंने कहा, "हाँ, ठीक है। मैं वह कहानी जानती हूँ। मैं माखनचोर कृष्ण के विषय में एक नृत्य देख चुकी हूँ।" वे बहुत प्रसन्न हुए और हँसने लगे। बोले—"ओह, हाँ, तुम जानती हो?"

स्वामीजी से यह भेंट एक पुराने मित्र से मिलने के समान थी, क्योंकि मैं अपने आपको बिल्कुल निस्संकोच और सुरक्षित अनुभव कर रही थी। और मुझे अनुभव हुआ कि मैं जो खोज रही थी, वह मुझे मिल गया है। यहाँ मैं अपनी बुद्धि का इस्तेमाल कर सकती थी और ऐसे प्रश्न पूछ सकती थी, जिन्हें मैं स्कूल में हमेशा पूछना चाहती थी।

प्रभुपाद ने लिंडा को दीक्षित किया ओर उसका नाम लीलावती रखा। उनकी स्वयं सेवा करने की उसकी उत्सुकता देखकर प्रभुपाद ने उससे अपना दोपहर का भोजन बनवाकर उसे भोजन बनाना सिखाया। सप्ताह के अन्त में वे एक छोटी कक्षा पहले से चलाया करते थे जिसमें जानकी, गोविन्ददासी, नन्दराणी और अन्यों को कृष्ण के लिए भोजन बनाने की कला सिखाते थे। अब उन्होंने लीलावती को भी आने को आंमत्रित किया। वे कमरे में आगे पीछे घूमा करते थे और लड़कियों को सिखाते थे कि आटा कैसे गूंधा जाता है, चपाती कैसे पकाई जाती है, दाईं हथेली में लेकर मसाले का अन्दाजा कैसे किया जाता है, सब्जी कैसे काटी जाती है और घी और मसाले में वह कैसे पकाई जाती है। आधारभूत भोजन था—चावल, चपाती, आलू के साथ गोभी—किन्तु वे लड़कियों को बताना चाहते थे कि भोजन ठीक-ठीक कैसे बनाया जाता है।

मुकुंद : *एक दिन उत्सुकतावश मैं स्वामीजी की भोजन-कक्षा देखने गया। मैं अन्दर गया और स्वामीजी की रसोई-घर के दरवाजे के पास खड़ा हो गया। महिलाएँ भोजन बनाना सीख रही थीं और स्वामीजी ने मुझसे कहा, "तुम क्या कर रहे हो?"*

"ओह," मैंने कहा, "मैं अपनी पत्नी को देखने आया था।"

तब स्वामीजी ने कहा, "तुम परमात्मा की ओर लौट रहे हो कि पत्नी की ओर?"

हर एक हँसने लगा और मुझे अनुभव हुआ कि मेरा वहाँ जाना किसीको अच्छा नहीं लगा। इसलिए मैं चला आया।

इस घटना से मुझे स्वामीजी की गंभीरता के बारे में विचार आया। मैंने एक तो यह सीखा कि मुझे अपनी पत्नी में इतना आसक्त नहीं होना चाहिए और दूसरी बात यह कि स्त्रियों के साथ उनका सम्बन्ध और जो कुछ वे उन्हें सिखा रहे थे, यह सब सचमुच बहुत

गंभीर मामला है—यह पति-पत्नी के बीच अठखेलियों-भरे सम्बन्ध की तरह नहीं। वे रसोई-घर में स्त्रियों को कई घंटे भोजन बनाना सिखाते थे, इसलिए वे बहुत उत्साहित थीं।

लीलावती को गर्व-सा होने लगा। भक्तों में बहुत से कालेज के स्नातक नहीं थे और प्राचीन साहित्य का छात्र तो कोई नहीं था। लीलावती कभी-कभी स्वामीजी के लिए टाइप का काम करती थी, उनके आदेश का पालन करती थी या प्रातःकाल उनके कमरे में फूल लाती थी। और उन्होंने तत्काल उसे विशेष रूप से अपना एकमात्र रसोइया चुन लिया था। केवल कुछ दिनों की पाक-शिक्षा के बाद स्वामीजी ने कहा था, "बहुत अच्छा, तुम भोजन बनाओ।" और उसका निरीक्षण करने के लिए वे अब केवल कभी-कभी जाते थे। एक दिन जब उन्होंने उसे रोटी बेलते हुए देखा तो वे बोले, "ओह, तुमने बहुत अच्छा सीख लिया है।"

स्वामीजी का भोजन ठीक से बनाना—सही मसाला डालना, किसी चीज को जलाना नहीं और बिल्कुल समय पर तैयार कर देना—यह सब कुछ सचमुच एक चुनौती था। भोजन तैयार करने तक लीलावती को पसीना आ जाता और तनाव के कारण वह रोने भी लगती। किन्तु जब वह स्वामीजी का भोजन लाती, तो वे उससे एक खाली प्लेट लाने को कहते और वे अपनी प्लेट से उसका हिस्सा निकालते और उसे अपने साथ खाने को आमंत्रित करते। पहले कुछ दिन तक लीलावती ने प्रसाद के अद्‌भुत स्वाद के विषय में टिप्पणी की और स्वामीजी या तो मुसकरा देते या दृष्टि ऊपर कर देते। किन्तु उसने देखा कि स्वामीजी खाते समय बोलते नहीं, वरन् भोजन पर ही ध्यान केन्द्रित करते हैं। वे पालथी मारकर बैठते थे, उनका शरीर प्रसाद की प्लेट के ऊपर झुका होता था और वे दाएं हाथ से खाते थे।

एक बार एकादशी के दिन लीलावती स्वामीजी के कमरे में देर से पहुँची; उसने सोचा कि उपवास के दिन कुछ अधिक पकाने को नहीं होगा। लेकिन जब वह रसोई-घर में घुसी, तो उसने देखा कि स्वामीजी स्वयं बड़ी व्यस्तता के साथ भोजन बना रहे थे। वे किसी सफेद चीज को गरम कर रहे थे और उसे जोर से हिलाते हुए कड़ाही के पेंदे से खुरच रहे थे। "ओह, मैं आश्चर्य में था कि वह लड़की कहाँ है?"

लीलावती इतना शरमा गई कि उसने यह नहीं पूछा कि स्वामीजी क्या कर रहे हैं। उसने अपने आपको सब्जी काटने में लगा दिया। "आज व्रत का दिन है।" उसने कहा, मानो स्वामीजी को रसोई बनाने के लिए डांट रही हो।

"तुम्हें समझना होगा," उन्होंने उत्तर दिया कि, "कृष्णभावनामृत में व्रत का दिवस भोज का दिवस होता है। हम इसे कृष्ण को अर्पित कर रहे हैं।" लीलावती स्वामीजी की सफेद चिपकाऊ चीज से दूर बैठी रही, जब तक कि वह तैयार नहीं हो गई और स्वामीजी

ने उसे ठंडा होने के लिए खिड़की पर नहीं रख दिया। "बाद में यह सख्त हो जायेगी," उन्होंने कहा, "और तब हम इसे काट सकते हैं और परोस सकते हैं। और यह कहने के साथ वे मुड़े और रसोई–घर से बाहर चले गए।

जब लीलावती ने भोजन पकाना खत्म किया और स्वामीजी को एकादशी का भोजन परोसा, तब उन्होंने उससे खिड़की पर रखी "वह चीज" लाने को कहा। उसे चखकर वे प्रसन्न हुए और लीलावती से कहा कि मुकुंद और जानकी को उसे चखने के लिए बुला लाओ।

जानकी ने एक कौर लिया और कहा, "अद्भुत है, सचमुच अद्भुत! अविश्वनीय! यह है क्या?"

लीलावती की ओर मुड़ते हुए स्वामीजी ने पूछा, "इसमें क्या है?"

"मैं नहीं जानती, स्वामीजी," उसने कहा।

"तुम नहीं जानती?" वे बोले, "तुम रसोई–घर में मेरी बगल में खड़ी थी और तुम्हें याद नहीं है?" लीलावती का चेहरा लाल हो गया।

"ओह! स्वामीजी," लीलावती ने उत्तर दिया, "मैं बहुत व्यस्त थी। मैंने देखा नहीं।"

"ओह, तुम व्यस्त रहती हो, बिना बुद्धि का इस्तेमाल किए।" वे बोले और देर तक हँसते रहे, जब तक कि मुकुंद ने भी हँसना बन्द नहीं किया। लीलावती और भी लज्जित अनुभव करने लगी।

स्वामीजी ने जानकी से पूछा कि क्या वह बता सकती थी कि उस व्यंजन में क्या पड़ा था। वह कुछ नहीं बता सकी, सिवाये इसके कि वह मीठा था। तब उन्होंने गोविन्ददासी और गौरसुन्दर को बुलाने के लिए लीलावती को नीचे भेजा। जब वे कमरे में घुसे, तो स्वामीजी ने लीलावती से कहा, "जाओ और उस अद्भुत चीज में से थोड़ा और लाओ।"

पुनः इस बार उन चार भक्तों की उपस्थिति में स्वामीजी ने लीलावती से पूछा, "अच्छा, इस व्यंजन में क्या है?" और फिर उसने अपने बचाव में वही बात कही; वह इतनी व्यस्त थी कि उसने देखा नहीं और स्वामीजी फिर हँसे, जब तक कि हर एक उनके साथ हँसने नहीं लगा। तब उन्होंने गोविन्ददासी से उस "अद्भुत पदार्थ" को चखने और यह बताने को कहा कि उसमें क्या पड़ा है। तुरन्त उसने अनुमान लगाया कि शक्कर, घी और दूध का पाउडर।

"ओह," स्वामीजी ने लीलावती को देखकर कहा, "वह कलाकार है, बुद्धिमती है।"

लीलावती के लिए पूरी घटना विकट परीक्षा थी। केवल बाद में उसे समझ आई कि स्वामीजी उसे विनयशीलता सिखा रहे थे।

• • •

सात बजे सवेरे का समय था। प्रभुपाद मन्दिर में अपने मंच पर बैठे थे। उनकी बगल में, एक मंच पर हाल में प्राप्त कृष्ण की प्रतिमा थी। प्रतिमा दो फुट ऊँची थी। बालक कृष्ण का बायां हाथ उनके नितम्ब पर था और दाएं हाथ में वे एक डंडा लिए थे। गुरुदास ने उसे एक आयात-भंडार में पाया था और मैनेजर से उसे बेचने की प्रार्थना की थी और कई बार जाने के बाद मैनेजर राजी हो गया था—पैंतीस डालर में। प्रभुपाद ने उसका नाम कर्तामिशायी "स्वामी" रखा था। आज प्रातःकाल जब प्रभुपाद और कर्तामिशायी ने कमरे में भक्तों पर दृष्टि डाली, तो वहाँ केवल छह भक्त मौजूद थे। एक रात पहले मन्दिर भीड़ से भरा था।

"और लोग कहाँ है ?" प्रभुपाद ने पुछा। और तब उन्होंने स्वयं उत्तर दिया, "वे सो रहे हैं ? इतना अधिक सोना ठीक नहीं।" उन्होंने अपने करताल निकाले और वे एक-दो-तीन की लय में बजाने लगे। मुकुंद ने मृदंग उठाया और वह उनके साथ बजाते हुए, उससे हाल में प्रभुपाद द्वारा सिखाई गई लय निकालने का प्रयत्न करने लगा।

प्रभुपाद ने गाना शुरू भी नहीं किया था कि दरवाजा खुला और आधे दर्जन हिप्पी नंगे पाँव कमरे में लुढ़कते हुए घुसे; उनसे मारिजुआना की बू आ रही थी। चारों ओर देखकर वे फर्श पर भक्तों के साथ बैठ गए। इस बीच प्रभुपाद गुरु महाराज के प्रति वैष्णव प्रार्थना "गुरु अष्टकम्" गाने लगे थे।

यद्यपि उनके शिष्यों में से कोई भी प्रार्थना के शब्द नहीं समझता था, फिर भी उन्हें इन प्रातःकालीन प्रार्थना-गीतों को स्वामीजी से सुनना प्रिय लगता था। शीघ्रता किए बिना, वे हर श्लोक को गाते थे और उसकी हर पंक्ति को कई बार दुहराते थे; इस प्रकार आध्यात्मिक गुरु के प्रति विशुद्ध सेवा की प्रवृत्ति का वे निश्चयपूर्वक विकास करते थे।

तब एक हिप्पी लड़का, जिसके लम्बे सीधे सुन्दर बाल थे और जो सिर में लाल फीता बाँधे था, बड़बड़ाने और सिसकने लगा। किसी ने धीरे से उसे शान्त रहने को कहा। लड़का रुक गया, लेकिन फिर सिसकने लगा। स्वामीजी और उनके अनुयायी इस बात के अभ्यस्त थे कि नशीली दवाएँ खाए हुए हिप्पी रात-भर बाहर रहते थे और सवेरे के कार्यक्रम में मन्दिर पहुँचते थे, जिसमें कभी-कभी कार्यक्रम में विध्न पड़ता था। आमतौर पर ये दर्शक विनयशील होते थे। और यदि कभी-कभी वे विचित्र मनोदशा में होने से बोल भी पड़ते थे, तो हरे कृष्ण जपने और भक्तों की शक्ति-धारा में बहने के प्रयत्न में उन्हें प्रायः शान्ति मिलती थी। किन्तु आज का अनमेल दर्शक कीर्तन से आंदोलित मालूम होता था, मानो यह कीर्तन उसे चुनौती दे रहा हो। प्रत्युत ऐसा लगता था मानो वह दर्शक उसे चुनौती दे रहा हो।

भक्तों ने प्रभुपाद के करतालों के साथ ताली बजाना आरम्भ किया और जब प्रभुपाद

हरे कृष्ण गाने लगे, तो उनके आधे दर्जन अनुयायियों ने सामूहिक गाना और टेक दोनों गाकर तुरन्त उनका साथ दिया। प्रभुपाद ने उनकी ओर गम्भीर मुद्रा से देखा; वे बिस्तर से उठकर भागे आए हुए अपने उन छोकरों को प्रोत्साहित कर रहे थे। वे छोकरे जी-जीन से उनका अनुगमन कर रहे थे।

अतिथि नशीली दवा के प्रभाव से ध्यानमग्न बैठे थे, यद्यपि उनमें से एक या दो अलग से गाने का प्रयत्न कर रहे थे। लेकिन वह गोरा-सुन्दर लड़का, जो सिर में लाल फीता बाँधे था, असमन्वित-सा जमकर बैठा रहा। वह अवज्ञापूर्वक सिसकियाँ भरता रहा, मानो वह कीर्तन के प्रभाव को उतार फेंकने का प्रयत्न कर रहा हो। इतने पर भी, लड़के के सिसकने के बावजूद, जो कभी-कभी जोर पकड़ लेता था और भयानक हो जाता था, प्रभुपाद गाते रहे और भक्त हरे कृष्ण के कीर्तन में लगे रहे।

मुकुंद और हयग्रीव ने एक दूसरे को चिन्तातुर दृष्टि से देखा, लेकिन वे उस लड़के का व्यवहार सहन करते रहे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करना चाहिए। कुछ भक्तों को विघ्न मालूम हो रहा था और वे डर भी गए थे। लेकिन उन्होंने स्वामीजी के हाल के व्याख्यानों में सुना था कि पारंगत भक्त किन्हीं भी परिस्थितियों में क्षुब्ध नहीं होते। स्वामीजी उनके नेता थे, केवल भक्ति में ही नहीं, वरन् इस बात में भी कि इस हस्तक्षेपकर्ता से कैसे जाये। इसलिए उनसे संकेत पाने की प्रतीक्षा में वे उनकी ओर देखते रहे।

प्रभुपाद शान्त बने रहे। किन्तु, यद्यपि बीस मिनट के बाद कीर्तन तेजी पर पहुँच गया, फिर भी उस सुन्दर गोरे लड़के का पागलपन नहीं गया। कीर्तन की गति ज्यों-ज्यों उत्कर्ष की ओर होती गई, वह और अधिक आन्दोलित होता गया। वह एक खोई हुई आत्मा की तरह चिल्लाने लगा और एक रॉक-गायक की भाँति अलापता हुआ उत्तरोत्तर अधिक अशान्त और क्रुद्ध होता जा रहा था।

जब भक्त खड़े हुए और नृत्य करने लगे, तो वह लड़का भी नाचने लगा, लेकिन अपने ही ढंग से चिल्लाते हुए और अपनी छाती पीटते हुए। मुकुंद ढोल और जोर से बजाने लगा। ध्वनियाँ आपस में अनमेल थीं; उनमें व्यक्तिगत पागलपन और सामूहिक कीर्तन का संघर्ष था। अन्त में प्रभुपाद ने कीर्तन बन्द कर दिया।

भक्तों ने फर्श पर सिर झुकाया और श्रील प्रभुपाद ने संस्कृत में आध्यात्मिक गुरुओं, परमात्मा और पवित्र स्थानों की प्रशस्ति का गान किया। "सभी एकत्रित भक्तों की जय हो।" उन्होंने कहा।

भक्तों का उत्तर था, "हरे कृष्ण।"

"सभी एकत्रित भक्तों की जय।"

"हरे कृष्ण।"

"सभी एकत्रित भक्तों की जय।"

"हरे कृष्ण।"

"बहुत धन्यवाद।" प्रभुपाद बोले और तब, जैसाकि उनका सवेरे का नियम था, उन्होंने कहा, "एक बार कीर्तन और हो।"

सनकी हिप्पी सहित सभी बैठ गए। भक्तों ने अपने करताल और ढोलक अलग रख दिए और लाल रंग की बड़ी मालाएँ हाथ में ले लीं और एक साथ जप करने लगे : हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे। एक बार में एक मनके पर अंगुलियाँ रखकर वे मंत्र बोलते थे और तब दूसरे मनके पर अंगुलियाँ ले जाते थे।

घटनाओं के इस तरह मोड़ लेने पर चकित होकर सुन्दर गोरे लड़के ने जोर से टिप्पणी की, "फार आउट।" तीव्र गति से होने वाले जप की ध्वनियों से जब कमरा भर गया, तब लड़का उछलकर खड़ा हो गया और चिल्लाया, "मेरे साथ आओ।" चारों ओर चक्कर लगाकर वह प्रभुपाद के सामने गया और चिल्लाया, "मैं ईश्वर हूँ।" तब वह जोर से चीखने-चिल्लाने लगा, "वोआहू... वाहू—आऽ—ऊह।" वह सिसकने लगा, बड़बड़ाने लगा और पाँव पटकने लगा।

एक छोटे बच्चे की तरह वह जितनी प्रकार की ध्वनियाँ पैदा कर सकता था, उतनी ध्वनियाँ उसने पैदा कीं। मुट्ठी से अपनी छाती बार-बार पीटते हुए, वह चिल्लाया—"मैं ईश्वर हूँ।" और लड़के के एक मित्र ने अचानक पैनपाइप से एक धुन पैदा की।

किन्तु श्रील प्रभुपाद जप करते रहे और भक्त-मंडली भी निडर होकर जप में लगी रही, किन्तु इसके साथ-साथ सब की दृष्टि उस सनकी लड़के पर थी। कोई नहीं जानता था कि इस का अन्त कहाँ होगा। अन्त में लड़का जोर से चीखा, "मैं ईश्वर हूँ।" और क्रोध और घृणा से भरकर वह कमरे के बाहर चला गया। अपने पीछे दरवाजा बन्द करके वह चिल्लाता हुआ सड़क पर भाग निकला।

समुचित शान्त भाव में चलते हुए जप से स्टोरफ्रंट भर गया और श्रील प्रभुपाद की आवाज अन्य भक्तों की आवाज के ऊपर और स्पष्टता से सुनाई देने लगी। करीब दस मिनट के जप के बाद प्रभुपाद ने गाया : "*सर्वात्म-स्नपनं परं विजयते श्रीकृष्ण-सङ्कीर्तनम्*—हरे कृष्ण के सामूहिक कीर्तन की जय हो, जो मन के दर्पण की मैल साफ करता है और उस अमृत की प्राप्ति कराता है, जिसके लिए हम सब सदा प्यासे रहते हैं।"

जब प्रभुपाद ने अपना चशमा धारण किया और *भगवद्गीता* खोली (वे हर दिन प्रात:काल छठे अध्याय पर बोलते थे) तो कमरे के सब लोग उनका व्याख्यान सुनने के लिए शान्त होकर बैठ गए। उनके अनुयायी, जिनमें से कुछ उनके उपदेशों को दो मास से

अधिक समय से आत्मसात कर रहे थे, उनके द्वारा प्रतिपादित शाश्वत परम्परा-सन्देश को ध्यानपूर्वक सुनने लगे। यह कृष्ण का कालातीत सन्देश था, फिर भी स्वामीजी अपने शिष्यों के लिए ही उसे प्रस्तुत कर रहे थे, जब वे हैट ऐशबरी के ५१८, फ्रेडरिक स्ट्रीट में छोटे-से स्टोरफ्रंट में बड़े सवेरे गलीचे पर बैठे थे।

प्रभुपाद ने आत्मा के आवागमन की व्याख्या की। उन्होंने कहा, मूर्खजन सांसारिक उपलब्धियों के लिए प्रयत्न करते हैं। वे नहीं जानते कि शरीर के मृत होने के साथ ये चीजें समाप्त हो जाती हैं। किन्तु आध्यात्मिक जीवन का महत्त्व सर्वाधिक है, क्योंकि यह कभी समाप्त नहीं होता। इसलिए यदि कृष्ण-चेतना असुविधाजनक या कष्टदायक भी हो, तो भी उसका त्याग कभी नहीं करना चाहिए।

श्रील प्रभुपाद पुनः इस बात पर बल दे रहे थे कि भक्त कभी क्षुब्ध नहीं होता। आज सवेरे कीर्तन में जो व्यवधान पैदा हुआ था, उसके सन्दर्भ में यह बात विशेष रूप से कथनीय थी। प्रभुपाद ने कहा, भक्त सदैव सहिष्णु होता है।

प्रभुपाद ने महान् भक्त हरिदास ठाकुर के सम्बन्ध में एक कहानी सुनाई, जो भगवान् चैतन्य के समकालीन थे। एक मुसलमान न्यायाधीश के हाथों उन्हें तीव्र मार खानी पड़ी थी। कहानी सुनाते समय प्रभुपाद ने संवाद का कल्पित रूप इस प्रकार रखा :

"ओह," मजिस्ट्रेट ने हरिदास से कहा, "तुम ऐसे अच्छे कुल में पैदा हुए हो और तुम हरे कृष्ण गा रहे हो?"

और तब प्रभुपाद ने हरिदास की बात कही, "महोदय, बहुत से हिन्दू भी मुसलमान हो गए हैं, तो यदि कोई मुसलमान हिन्दू बन जाता है, तो हानि क्या है?"

प्रभुपाद ने संवाद के भिन्न-भिन्न भागों को सुनाते हुए अपनी आवाज ऊँची-नीची नहीं की। किन्तु एक कुशल कहानी सुनाने वाले की कला का प्रदर्शन करते हुए उन्होंने अपनी आवाज से भिन्न-भिन्न पात्र की आवाज प्रस्तुत कर दी।

न्यायाधीश ने धमकाते हुए कहा, "ओह! तुम बहस कर रहे हो?" तब प्रभुपाद कथावाचक की भाँति बोलने लगे, "अतः निर्णय यह हुआ कि हरिदास को किसी बहाने से सजा मिलनी ही है। जैसे किसी कुत्ते को कोई बुरा नाम दे दो और उसे फाँसी पर चढ़ा दो।"

तब प्रभुपाद हरिदास को कोड़े लगाने वाले बन गए वे कोड़े लगा-लगाकर थक गए पर पीड़ा से हरिदास को रुला नहीं सके। अन्त में थककर वे बोले, "महोदय, ख्याल यह था कि आप मर जाएंगे, लेकिन हम देखते हैं कि आप मर नहीं रहे हैं। इसलिए अब सजा हमें मिलेगी।"

हरिदास—"तुम क्या चाहते हो।"

कोड़े लगाने वाले—"हम चाहते हैं कि आप मर जाँए।"

कथावाचक वर्णनकर्ता—"तब उन्होंने समाधि लगा ली और कोड़े लगाने वाले उन्हें मजिस्ट्रेट के पास ले गए।"

मजिस्ट्रेट—"इसे पानी में फेंक दो; कब्र में मत दफनाओ। वह हिन्दू हो गया है।"

श्रील प्रभुपाद ने अपनी कहानी का अन्त किया, "दूसरे लोग उन्हें कोड़े लगा रहे थे और वे जप कर रहे थे; हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे। वे अक्षुब्ध और स्थिर थे। इसलिए भगवान् कृष्ण कहते हैं कि उन व्यक्तियों के लिए जो आध्यात्मिक दृष्टि से पारंगत हो गए हैं, इस संसार में भी दुख नहीं है, परलोक का तो कहना ही क्या?"

भक्त हानि में नहीं रहता, प्रभुपाद ने समझाया। यदि वह पूर्णतः कृष्ण-चेतन नहीं भी होता, या यदि वह भटक भी जाता है, तो भी अगले जन्म में वह मनुष्य बनेगा।

"एक राजकुमार था," प्रभुपाद ने अपनी बात स्पष्ट करने के लिए एक और कहानी शुरू की, "उसका नाम सत्यवान् था। उसे एक निश्चित आयु का होकर मरना था। उसके जन्म-पत्र में ऐसा लिखा था। लेकिन सावित्री नाम की एक लड़की उसे प्यार करने लगी थी। अब वह उससे ब्याह करना चाहती थी। उसके पिता ने बताया कि लड़का कुछ वर्ष का होकर मर जायेगा, उससे ब्याह मत करो। लेकिन लड़की अड़ी रही। उसने उससे ही ब्याह कर लिया।

"चार-पाँच साल बाद लड़का मर गया और लड़की विधवा हो गई। किन्तु वह इतनी निष्ठावान् प्रेमिका थी कि उसने पति के शव को नहीं ले जाने दिया। और यमराज... अंग्रेजी में उन्हें क्या कहते हैं, जो मृत्यु के बाद शव को या जीव को ले जाते हैं? वह जीव को ले जाने के लिए आये। परन्तु वह पतिव्रता लड़की अपने पति के मृत शरीर को ले जाने नहीं देती थी।

प्रभुपाद अपनी आवाज से और विस्फारित नेत्रों से ऐसे लग रहे थे, मानो वे यमराज हों जो विधवा सावित्री से बोल रहा हो, "यह मेरा कर्तव्य है कि मैं शव को ले जाऊँ। तुम इसे छोड़ दो। नहीं तो तुम्हें भी दंड मिलेगा।" लड़की ने अपने पति को छोड़ दिया, लेकिन वह यमराज के पीछे चलने लगी।" तब अपनी आवाज कुछ धीमी करके, प्रभुपाद ने दयालु यमराज का रूप बनाया, "मेरी प्रिय बच्ची, घर जाओ। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हें एक लड़का होगा। अपने पति के लिए विलाप मत करो।" लेकिन सावित्री यमराज के पीछे चलती रही। यमराज ने कहा, "तुम मेरा पीछा क्यों कर रही हो?"

तब प्रभुपाद सावित्री के रूप में बोले, स्त्री की आवाज में नहीं, वरन् सावित्री के तर्क और मर्म के साथ, "आप मेरे पति को लिए जा रहे है। मैं पुत्र कैसे प्राप्त करूँगी?"

प्रभुपाद कहानी-वाचक के रूप में बोले, "ओह, तब यमराज धर्मसंकट में फँस गए। उन्होंने सावित्री का पति लौटा दिया।"

"इस प्रकार एक विधि है। यदि आप कृष्णभावनामृत की शरण अपना लेते हैं, तो आपका पति या जीवन का यह मानव रूप निश्चित हो जाता है।"

भक्त कहानी का सारांश समझ गए, लेकिन उनके लिए यह अच्छी तरह स्पष्ट नहीं हुआ कि उनके जीवन का कहानी की स्त्री से क्या सम्बन्ध है। लेकिन कुछ की समझ में आ गया कि यदि वे कृष्णभावनामृत प्राप्त कर लेते हैं, तो अधःपतन की ओर बढ़ता हुआ उनका जीवन भी सौभाग्यशाली बन सकता है।

"हाँ," श्रील प्रभुपाद ने कहना जारी रखा, "आध्यात्मिक जीवन सबसे सौभाग्यशाली जीवन होता है।" सामने फर्श पर बैठे हुए भक्तों पर उन्होंने गहरी दृष्टि डाली। "जिस किसी ने कोई अच्छा या शुभ काम किया है—ओह, वह कभी परास्त नहीं होगा। उस व्यक्ति को कभी कोई कठिनाई नहीं होगी। यह इतना अच्छा काम है।"

उन्होंने अपना व्याख्यान समाप्त किया और प्रश्न पूछने को कहा। एक युवती ने अपना हाथ उठाया, "आप कहते हैं कि मूर्ख लोग किसी ऐसे व्यक्ति के चित्र की पूजा करते हैं, जो मृत हो चुका है—आप ने जार्ज वाशिंगटन या गाँधी का उदाहरण दिया। किन्तु क्या किसी आध्यात्मिक गुरु का चित्र प्रेम करना सिखाने में औरों की मदद नहीं करता?"

प्रभुपाद : हाँ, जो आध्यात्मिक उन्नति कर चुके हैं, वे अपने चित्र से भिन्न नहीं हैं। जैसे यहाँ कृष्ण की मूर्ति है, यह कृष्ण से भिन्न नहीं है। मूल पुरुष कृष्ण और कृष्ण की यह मूर्ति दोनों एक हैं। जैसे हम हरे कृष्ण गा रहे हैं—कृष्ण और कृष्ण-नाम अभिन्न हैं। क्या आप इसे अनुभव करते हैं ? यदि हम हरे कृष्ण का जप करके कुछ आध्यात्मिक आलोक नहीं प्राप्त करते, तो क्या आप समझते हैं कि हम अपना समय व्यर्थ गंवा रहे हैं ? नहीं, हम अपना समय नहीं गंवा रहे हैं। हम सचमुच आध्यात्मिक आनन्द प्राप्त कर रहे हैं, क्योंकि दोनों में कोई भेद नहीं है। इसी तरह आध्यात्मिक दृष्टि से पूर्ण पुरुष और उनका चित्र एक है, क्योंकि यह निरपेक्ष अवस्था है। क्या बात स्पष्ट हुई ?"

गोविन्ददासी ने अपना हाथ उठाया : "आपने कहा कि कृष्णभावनामृत प्राप्त व्यक्ति यह शरीर छोड़ने के बाद उच्च लोक को जाता है ?"

प्रभुपाद : "नहीं, यदि तुमने कृष्णभावनामृत में पूर्णता प्राप्त कर ली है, तो यह शरीर त्यागने के बाद तुम सीधे कृष्ण के पास जाओगी। किन्तु यदि तुम पूर्ण नहीं हो, यदि तुमने केवल कुछ प्रतिशत की प्राप्ति की है, तो तुम्हें दूसरे मानव-शरीर का अवसर मिलेगा। किन्तु जिसने समझ लिया है कि कृष्ण क्या है—कृष्ण अवतरित कैसे होते हैं, कृष्ण लीला कैसे करते हैं—वह फिर मृत्यु-लोक में नहीं पैदा होता। तब वह कहाँ जाता है ? *त्यक्त्वा*

देहं *पुनर्जन्म नैति मां एति*—"वह मेरे पास आता है।" इसका तात्पर्य यह है कि वह कृष्ण के परम धाम में जाता है।

इसलिए हमें बहुत गम्भीर रहना चाहिए। हम पुनर्जन्म के लिए प्रतीक्षा क्यों करें, किसी पवित्र कुल में, धनाढ्य कुल में या अन्य लोक में? यह मानव-शरीर तुम्हें चरम सिद्धि दे सकता है। लेकिन हमें मन लगाकर उस सिद्धि के लिए प्रयत्न करना होगा। हम ध्यान नहीं लगाते। हम बहुत गम्भीर नहीं हैं। सचमुच मानव-सभ्यता का अर्थ यह है कि लोग मानव-शरीर से पूर्णता प्राप्त करने में पूरा ध्यान लगाएँ—वही पूर्ण मानव-सभ्यता है। वर्तमान युग में इसका अभाव है।"

श्रील प्रभुपाद कई मिनट तक बिना हिले-डुले मौन बैठे रहे। सभा में से किसी ने कोई आवाज नहीं की। अन्त में उन्होंने अपने करताल उठा लिए और दोनों को जोर से बजाते हुए गाने लगे : *गोविन्द जय जय, गोपाल जय जय।* भक्तों ने उनका साथ दिया :

गोविन्द जय जय
गोपाल जय जय
राधा-रमण हरि
गोविन्द जय जय।

प्रभुपाद की इच्छा थी कि उनके शिष्य अपने में कृष्ण-चेतना का शत-प्रतिशत विकास इसी जीवन में कर लें। वे कर भी सकते थे, क्योंकि जप में पूरी शक्ति थी। यदि कोई चीज उनकी समझ में नहीं आती, तो वे उन्हें समझा सकते थे। गोविन्ददासी ने नहीं समझा था। उसने सोचा था कि भक्त को उच्च लोक में जाना होता है। लेकिन अब उसकी समझ में बात आ गई।

और प्रभुपाद ने अपने शिष्यों को अधिक गम्भीर बनने को कहा था। वे जानते थे कि कभी-कभी वे कीर्तन के बाद मालपुए की दुकान पर जाते थे और सिगरेट तक पीते थे, वे इसे सहन करते थे। लेकिन उन्होंने उन्हें बता दिया कि वे चाहते हैं कि उनके शिष्य गम्भीर बनें। जब तक वे पूर्णत: गम्भीर नहीं बनते, तब तक उन्हें इसी भौतिक जगत में उच्चतर लोक में जाना पड़ सकता है और उससे क्या लाभ होगा? मानव-जीवन पाने में कई जन्म लेने पड़े हैं। मानव-जीवन पूर्णता के लिए है, इसलिए उन्हें गम्भीर बनना चाहिए। "लेकिन," उन्होंने कहा था, "हम गम्भीर नहीं हैं।"

कीर्तन के बाद श्रील प्रभुपाद स्टोरफ्रंट से अपने कमरे में चले गए। हयग्रीव ने हरिदास से पूछा कि किसी ने उस सनकी लड़के को उठाकर बाहर क्यों नहीं फेंक दिया। "न्यूयार्क में," हयग्रीव ने कहा, "ब्रह्मानन्द ने उसे पहली चिल्लाहट पर बाहर कर दिया होता।"

"तुम्हें यहाँ हिप्पियों से सावधान रहना है।" हरिदास ने समझाया। "यहाँ चतुराई शब्द

उपयुक्त होगा। इस पड़ोस में यदि कोई एल.एस.डी. में धुत इधर-उधर घूमता है, तो लोग स्वभावत: मान लेते हैं कि उसे भगवान् जैसा सम्मान देना चाहिए और वह जो भी करे उसे सहन करना चाहिए। वे अन्दर आ जाते हैं, उछल-कूद करते हैं और चिल्लाने लगते हैं, लेकिन हम उन पर हाथ नहीं रख सकते, क्योंकि वे एल.एस.डी. के संत हैं। यदि हम ने उस लड़के को आज सवेरे छुआ होता, तो सारा पड़ोस हम पर टूट पड़ता। साथ वाले मकान में रहने वाले डिगर्स बहुत शोर करते हैं, लेकिन व्याख्यान के समय वे अपना जूकबाक्स (एक प्रकार का ग्रामोफोन बक्स) बन्द कर देते हैं; उनका हमारे साथ बहुत मित्रता का व्यवहार है। वे हमें वस्त्रादि देते हैं और मन्दिर सजाने में हमारी मदद करते हैं। कभी-कभी हेल्स ऐंजल्स वहाँ आ जाते हैं और बहुत शोर करते हैं और कभी-कभी यहाँ अन्दर भी घुस आते हैं। यदि वे ऐसा करें तो अच्छा यही होता है कि उन्हें फुसलाया जाये। वे हमेशा कष्ट देते हैं।"

ठीक उसी सवेरे कुछ हेल्स ऐंजल्स ने डिगर्स स्टोर में झगड़ा शुरू कर दिया। एक मोटे-ताजे काले आदमी ने हेल्स ऐंजल्स के तीन हिप्पियों को पीट दिया था। उसका धमाका और चीखना-चिल्लाना दीवार के पास से भक्तों को सुनाई दे रहा था। झगड़ा तब बन्द हुआ, जब वहाँ एक पुलिस की कार और ऐम्बुलेंस गाड़ी पहुँच गईं।

बाद में झगड़े के विषय में बात करते हुए लगभग एक दर्जन लोग मन्दिर में चले आए। हर्षराणी ने उन लोगों के खाने के लिए अतिरिक्त प्लेटें लगाईं।

• • •

एक दिन मार्च के महीने में अठारह वर्षीय वेन गुंडर्सन सड़क पर जा रहा था कि फुटपाथ पर एक कागज का उड़ता हुआ टुकड़ा उसके पैर से आ लगा। उसने अपनी चाल रोके बिना, उसे पैर से ठोकर मारनी चाही, लेकिन वह चिपका रहा। तब वह रुका और उसे फिर ठोकर मारने की कोशिश की। लेकिन उसे सफलता नहीं हुई। तब उसने उसे उठाया और देखा कि वह एक इश्तिहार था—"सदैव ऊँचे रहिए," जिसमें स्वामी भक्तिवेदान्त द्वारा ५१८ फ्रेडरिक स्ट्रीट में व्याख्यान का विज्ञापन था।

बहुत से लोगों की तरह, वेन जो नरम स्वभाव का युवक था और डाकखाने में काम करता था, हैट ऐशबरी क्रान्ति में भाग लेने आया था। वह राक-डांस में शामिल होता था, मनोवैज्ञानिक दुकानों में जाकर पुस्तकें और पोस्टर्स पलटता था; अपनी मित्र लड़की और एक अन्य दम्पति के साथ एक ही कमरे में रहता था और नशीली दवाओं का सेवन करता था। लेकिन वह शान्त, विनम्र और एकान्त-प्रिय था। वह हिप्पी की तरह कपड़े नहीं पहनता था, वरन् साफ-सुथरे, परम्परागत, सामान्य वस्त्र धारण करता था और सिर पर एक

विचित्र प्रकार की स्पोर्ट टोपी पहनता था।

स्वामीजी के इश्तहार का वेन के हाथ आ जाना एक अच्छा संयोग था, क्योंकि वह भारत जाकर गुरु खोजने की योजना बना रहा था। उसने फ्रेडरिक स्ट्रीट जाकर स्वामी भक्तिवेदान्त से मिलने का निश्चय किया।

वेन को वहाँ केवल एक स्टोरफ्रंट पाकर आश्चर्य हुआ। खिड़की में स्वामीजी का चित्र देखकर उसे आश्चर्य हुआ। वह किसी मुसकाते, दाढ़ी वाले योगी का चित्र नहीं, वरन् सपाट मुंडे हुए सिर, रुक्ष मुद्रा वाले त्यागी का चित्र था।

वेन अन्दर घुस गया। वहाँ उसने हैट ऐशबरी का विचित्र दृश्य देखा। चारों ओर हिप्पी बैठे थे, लेकिन वहाँ कुछ लोग ऐसे भी थे जिनके गले में माला की तरह बड़े लाल मनके लटक रहे थे। और सामने उसने स्वामीजी को देखा। वेन स्वामीजी के हरे कृष्ण कीर्तन से प्रभावित हुआ और उसे उनका व्याख्यान जोरदार और अधिकृत लगा। स्वामीजी ने बल देकर कहा कि, "हम ये शरीर नहीं हैं।" और जब वे कृष्ण के विषय में बोले, तो लगता था मानो वे कृष्ण से हर एक का व्यक्तिगत परिचय करा रहे हों।

कुछ भेंटों के बाद वेन को प्रश्न पूछने का साहस हुआ, "क्या कोई हठ-योग और कृष्णभावनामृत दोनों का अभ्यास एक साथ कर सकता है?"

"ओह, तुम इस शरीर के साथ इतना समय क्यों गंवाना चाहते हो?" प्रभुपाद ने उत्तर दिया और वेन को लगा कि प्रभुपाद की आँखें उसे गहराई से देख रही थीं। "तुम वह शरीर नहीं हो।" प्रभुपाद ने इतना बलपूर्वक कहा कि वेन को, जो सहज ही बुरा मान जाता था, ऐसा अनुभव हुआ मानो वह जमीन में गड़ रहा हो। "यह शरीर इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि आत्मा।" श्रील प्रभुपाद ने समझाया। "इसलिए हमें शरीर की आवश्यकताओं की अतिशयोक्ति करते हुए उस पर उतना समय नहीं लगाना चाहिए।" तब वे वेन की ओर देखकर मुसकराए। "इसके अतिरिक्त सभी योगों का अन्त कृष्णभावनामृत में होता है," और वेन को लगा कि प्रभुपाद की मुसकान ने संकुचित और घुटन-भरी स्थिति से उसे पूर्णतया उबार लिया है।

कई सप्ताह के बाद वेन ने दीक्षित होने की माँग की। जब भक्तों ने उसे ऊपर जाकर स्वामीजी से मिलने को कहा, तो वेन घर गया और दीक्षित होने के समय पूछे जाने वाले प्रश्नों के अपने उत्तरों का पहले अभ्यास किया। उसने अनुमान लगाया कि प्रभुपाद क्या पूछेंगे और उसने अपने उत्तर तैयार किए। उनके साथ पूरे वार्तालाप को वह मन ही मन तैयार कर गया। तब सकुचाता हुआ वह प्रभुपाद के दरवाजे पर पहुँचा।

किन्तु इसके पहले कि वह दरवाजा खटखटाए, दरवाजा खुल गया और प्रभुपाद उसे देखते हुए सामने खड़े थे—कठोर मुद्रा में नहीं, जैसाकि वह चित्र में दिखाई देते थे, वरन्

स्नेहिल मुद्रा में, मानो वे उसके आने की प्रत्याशा में हों। "ठीक" प्रभुपाद ने कहा, "अन्दर आओ।" इस घटना से वेन ने जो योजना बनाई थी वह खत्म हो गई। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि स्वामीजी लोगों के मन की बात जान सकते थे। अतः अपने मन से बुरे विचारों को निकालने की कोशिश करता हुआ वह प्रभुपाद के कमरे में प्रविष्ट हुआ।

प्रभुपाद अपनी घूमने वाली कुर्सी पर बैठे और वेन, जो प्रायः फर्श पर बैठता था, कमरे में पड़ी दूसरी कुर्सी पर बैठा। वेन को तुरन्त ही संकोच अनुभव होने लगा, जबकि उसके मन में यह विचार आया कि उसके लिए अधिक उचित होगा कि वह प्रभुपाद के चरणों में बैठे। लेकिन स्थिति को बदलने में अपने आपको असमर्थ अनुभव करता हुआ, वह कुर्सी पर बैठा रहा और अंगुलियों को अपनी स्पोर्ट टोपी पर घुमाता रहा। "स्वामीजी," उसने कहना शुरू किया, "मैं आपका शिष्य बनना चाहता हूँ।"

प्रभुपाद तुरन्त राजी हो गए। उन्होंने पूछा कि क्या वेन चार सिद्धान्तों का पालन कर सकता था और वेन ने, यह जाने बिना ही कि वे चार सिद्धान्त क्या थे, उत्तर दिया कि वह कर सकता था। तब प्रभुपाद ने पूछा कि उसके लिए किस सिद्धान्त का पालन करना सबसे कठिन था। "ओह," वेन बोला, "मांसाहार छोड़ना मेरे लिए समस्या है।" वह झूठ बोल रहा था—वह शाकाहारी था। उसे यह कहने में बहुत शर्म लग रही थी कि उसकी सबसे बड़ी समस्या उसकी अनियंत्रित यौनाचार की इच्छा थी। प्रभुपाद हँसने लगे। "ओह, यह कोई समस्या नहीं है। हम तुम्हें प्रसाद देंगे। तुम अगले सप्ताह दीक्षित हो सकते हो।"

वेन ने तब पूछा कि क्या वह भारत जा सकेगा। उसे लगा कि स्वामीजी यह सुनकर प्रसन्न होंगे कि उनका नया शिष्य उनके देश जाना चाहता है। लेकिन प्रभुपाद खिन्न हो उठे। "भारत? भारत क्यों?" वेन सोच में पड़ गया—भारत जाने की उसकी इच्छा के पीछे वास्तविक कारण यह था कि वह एक गुरु पाना चाहता था।

"ओह," वह बोला, "संस्कृत सीखने के लिए।"

"तुम्हें संस्कृत मैं सिखाऊँगा," प्रभुपाद ने उत्तर दिया। इसलिए भारत जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी। और वह अगले सप्ताह एक सच्चे गुरु से दीक्षित हो जायेगा—यहीं सैन फ्रांसिस्को में ही।

कुछ भक्तों ने दीक्षा-संस्कार की तैयारी में वेन की मदद की। हयग्रीव ने अपनी धोती उधार दी—केसरिया रंग के कपड़े का एक टुकड़ा जो वेन के लिए बहुत लम्बा था। भक्तों ने स्टोरफ्रंट में वेदिका बना दी—वहाँ समिधा, रंग, फूल इत्यादि जुटा दिए।

संस्कार के बीच वेन घबराया-सा था। जब प्रभुपाद ने मंत्रों का उच्चारण किया, तो वेन उन्हें ठीक से सुन नहीं सका, इसलिए उसने जितना हो सका, उनका अनुकरण किया। और जब प्रभुपाद ने हवन-क्रिया आरम्भ की तो वेन कुछ डर गया, क्योंकि उसे दीक्षा

काफी गम्भीर प्रतिबद्धता प्रतीत हुई। उसने देखा कि प्रभुपाद बहुत गम्भीरता से हवन की अग्नि प्रज्ज्वलित कर रहे हैं और मंत्र बोल रहे हैं। जब प्रभुपाद ने वेन को उसके नये नाम उपेन्द्र से दीक्षित किया, तो वेन उसे साफ सुन नहीं सका और चिन्ताकुल हो गया। तब समारोह समाप्त हुआ और प्रभुपाद उठ खड़े हुए और अचानक स्टोरफ्रंट से चले गए।

उपेन्द्र : *किसी ने मुझे याद दिलाया कि मुझे ऊपर जाना चाहिए और प्रभुपाद को कोई उपहार देना चाहिए। इसलिए मैंने उन्हें एक छोटा कम्बल और तौलिया देने का निश्चय किया। ऐसा नहीं था कि मेरे पास पैसे न हों, किन्तु ये चीजें मेरी भावना से जुड़ी थीं, इसलिए मैं उन्हें स्वामीजी को देना चाहता था। मैं ऊपर उनके कमरे में गया। वे अपनी चटाई के किनारे बैठे थे। प्रविष्ट होकर मैंने उन्हें वन्दन किया और कम्बल और तौलिया अर्पित कर दिया। उन्होंने अपनी अंगुलियों से उन्हें उठाया और अपने दोनों हाथों से उन्हें देखा। वे बोले "ये चीजें व्यर्थ हैं।" और उन्हें फर्श पर फेंक दिया। मुझे दुख हुआ और मैं कुछ बोला नहीं। वहाँ बैठा रहा। कुछ देर के बाद बहाना करके मैं उठा और अपने कमरे में चला गया।*

दूसरे दिन मैं स्वामीजी के संध्याकालीन मिलने के समय के दौरान उनके पास गया। उन्होंने कम्बल और तौलिये को गलीचे की तरह फर्श पर बिछवा दिया था, जिससे उनके मिलने को आने वाले अतिथियों को बैठने के लिए कोई चीज मिल जाये। मुझे संतोष हुआ कि उन्होंने मेरे उपहारों का कोई उपयोग निकाल लिया था।

प्रभुपाद ने कहा कि उपेन्द्र अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार नहीं रह रहा था, क्योंकि एक लड़की के साथ, जो उसकी मित्र थी, उसका रहना जारी था। उपेन्द्र इस विषय में अपने आपको अपराधी अनुभव कर रहा था कि वह अवैध यौनाचार और मद्य-सेवन को निषिद्ध करने वाले सिद्धान्तों को भंग कर रहा था, लेकिन उन सिद्धान्तों का पालन उससे नहीं हो सकता था। वह स्वामीजी को बता देना चाहता था, किन्तु उसे साहस नहीं हो रहा था। इसके अतिरिक्त उसने सोचा कि यदि वह स्वामीजी के सामने अपना अपराध स्वीकार भी कर ले, तो उनसे छुटकारा कैसे पाएगा ? उपेन्द्र की मित्र लड़की को कृष्णभावनामृत पसन्द नहीं था, वह स्वामीजी से नहीं मिलना चाहती थी और मन्दिर नहीं जाना चाहती थी। इसलिए स्वामीजी ने निर्णय किया कि उस लड़की से उपेन्द्र का विवाह कराने के स्थान पर वे उपेन्द्र को उससे बचाएँगे।

प्रभुपाद ने उपेन्द्र को ब्रह्मचारी बनाने का निर्णय किया। यद्यपि सैन फ्रांसिस्को में श्रील प्रभुपाद के लगभग पचीस शिष्य थे, लेकिन उनमें से ब्रह्मचारी शायद ही कोई था। सचमुच पक्का ब्रह्मचारी केवल एक जयानन्द था, जो अवस्था में औरों से कुछ बड़ा था। जयानंद दिन-भर टैक्सी चलाता था और टैक्सी चलाते समय भी हरे कृष्ण का जप करता था। और

जब उसे काम से फुर्सत होती, तो वह मंदिर में आता था। वहाँ वह भोजन बनाता या कोई अन्य सेवा-कार्य करता अथवा अन्य भक्तों के साथ स्वामीजी के कमरे में उनके पास बैठा रहता। वह अपने गंभीर जप के लिए प्रसिद्ध था। पालथी मारकर और आँखें बिल्कुल बंद करके, वह दोनों हाथों से माला फेरता हुआ आगे-पीछे झूमता रहता और लगभग फर्श को स्पर्श करने लगता और गंभीरता से मंत्र जपता रहता। उसे बाहरी दुनिया की कोई खबर न रहती। वह बिल्कुल गंभीर रहता। और ब्रह्मचारी बने रहने का केवल यही एक तरीका था। न्यूयार्क में प्रभुपाद के शिष्यों में लगभग एक दर्जन ब्रह्मचारी थे, किन्तु सैन फ्रांसिस्को में अपने अनुयायियों के प्रति उनका दृष्टिकोण अधिक उदार था, इसलिए यहाँ ब्रह्मचर्य जीवन अधिक कठिन था।

प्राचीन भारत के मूल वैदिक समाज में ब्रह्मचर्य जीवन पाँच वर्ष की अवस्था में शुरू होता था। माता-पिता अपने पुत्र को गुरु के साथ रहने के लिए गुरुकुल में भेज देते थे, जहाँ उसे गुरु से प्रारम्भिक शिक्षा, आध्यात्मिक शिक्षा और कड़े नैतिक अनुशासन की शिक्षा मिलती थी। भगवान् कृष्ण भी जब वे अपनी दिव्य लीलाओं के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुए थे, गुरुकुल में रहते और उन्होंने भी अपने आध्यात्मिक गुरु की सेवा विनम्रतापूर्वक की थी।

ब्रह्मचर्य जीवन का मूलभूत सिद्धान्त इन्द्रिय निग्रह है। इन्द्रिय निग्रह का अभ्यास करने से ब्रह्मचारी की स्मरण-शक्ति बढ़ती है और अपनी इन्द्रियों पर उसका अधिकार होता है। और यदि ऐसा ब्रह्मचारी अन्त में विवाह करने का निर्णय करता था, तो उसका यौनाचार नियंत्रित होता था, स्वच्छन्द नहीं। लेकिन यद्यपि स्वस्थ समाज के लिए ब्रह्मचर्य जीवन आवश्यक था, प्रभुपाद ने अपने जीवन-काल में ही ब्रह्मचर्य का तीव्र ह्रास देखा था, यहाँ तक कि अब वह निःशेषप्राय हो रहा था।

और अमेरिका में तो स्थिति और भी खराब थी। श्रीमद्भागवत में एक युवा ब्राह्मण, अजामिल की कथा आती है, जिसका आध्यात्मिक जीवन से केवल इसलिए पतन हो गया कि उसने एक शराबी आदमी को एक अर्ध-नग्न वेश्या को आलिंगन करते देख लिया था। अमेरिका में एक अर्ध-नग्न वेश्या को सार्वजनिक रूप से देखना कोई असामान्य बात नहीं थी। वहाँ एक ब्रह्मचारी ज्योंही सड़क पर निकलता था, उसे कितने प्रलोभनों से सामना करना पड़ता था। किन्तु प्रभुपाद का विश्वास था कि अमेरिका में भी ब्रह्मचारी अपने आपको बचा सकते हैं, यदि वे नियमित रूप से हरे कृष्ण का जप करें और सच्चे मन से नियमों और विधानों का पालन करें। कृष्ण स्वयं उनकी रक्षा करेंगे।

प्रभुपाद ने निश्चय किया था कि वे उपेन्द्र को अपने व्यक्तिगत सेवक के रूप में साथ रहने को कहेंगे। उनके पहले सेवक, रणछोड़ ने अपने पद का त्याग कर दिया था। वह

यद्यपि कहने को ब्रह्मचारी था, किन्तु वह सच्चा ब्रह्मचारी कभी नहीं रहा। उसने न्यूयार्क में एक युवती महिला भक्त को प्रलोभन में फँसाया भी था। प्रभुपाद को इस बात का पता लग गया और उन्होंने उस महिला से पूछा था कि यदि वह रणछोड़ से विवाह करने का इरादा नहीं रखती थी, तो उसने उसके साथ यौनाचार क्यों किया? प्रभुपाद के "क्यों?" शब्द से वह युवती इस तरह अवाक् हो गई थी कि वह कोई उत्तर नहीं दे सकी थी। प्रभुपाद ने उसे ताड़ना दी थी, "तुम युवतियों को अपने आपको इस कदर सस्ती नहीं बनाना चाहिए।" उन्होंने रणछोड़ को दूसरा मौका दिया था।

लेकिन रणछोड़ कभी गम्भीर नहीं बना। एवलान बालरूम में बृहत् कीर्तन के समय नगाड़े बजाने के बाद रणछोड़ नृत्यकक्ष के मोह में फँस गया था। वह सेवा-कार्य छोड़कर चोरी से बाहर निकल जाता, अपनी अनुपस्थिति के बारे में प्रभुपाद से झूठ बोलता और एवलान में लड़कियों के पीछे भागता रहता। एक दिन वह वापस नहीं आया। एक भक्त ने प्रभुपाद को बताया, "वह लट्टुओं के प्रकाश में बस गायब हो गया है।" रणछोड़ एक बार वापस आया—प्रभुपाद से पैसे माँगने ताकि वह अपने घर न्यूयार्क लौट सके।

उपेन्द्र अपनी दुर्बलताओं के बावजूद प्रभुपाद की ओर सहज ही आकृष्ट था और जहाँ तक सम्भव होता, वह उनके साथ रहना चाहता था। कभी कभी एक-दो और भक्तों के साथ वह प्रभुपाद के कमरे में ऊपर पहुँच जाता और उनके सामने बैठ जाता, जबकि प्रभुपाद अपनी छोटी डेस्क के पीछे पतली गद्दी पर बैठे होते थे। कभी ऐसा भी होता कि प्रभुपाद पढ़ने या लिखने में लगे रहते और उपेन्द्र उनकी उपस्थिति का आनन्द लेता बैठा रहता और कार्यरत प्रभुपाद को मात्र देखता रहता। दस-बारह मिनट के बाद प्रभुपाद उसकी ओर देखते और कहते, "ठीक है, यह पर्याप्त है।" और लड़के उन्हें सिर झुकाकर चले जाते। उपेन्द्र प्रभुपाद के पास तब भी जाता, जब वे भोजन करते होते थे। वे अपनी प्लेट से कुछ चावल और सब्जी उठाकर एक चपाती पर रखते थे और उसे उपेन्द्र को देते थे। यद्यपि यह प्रसाद वैसा ही था जैसा अन्य भक्त नीचे खाते थे, लेकिन उपेन्द्र के विचार से वह अधिक स्वादिष्ट होता था।

एक दिन जब उपेन्द्र प्रभुपाद के कमरे में उनके साथ अकेला था, तब प्रभुपाद ने पूछा, "क्या तुम एक नौजवान लड़की के और ऐसे लोगों के साथ रहते हो, जो नशा-सेवन करते हैं?" दूसरी बार उपेन्द्र को विश्वास हुआ कि स्वामीजी उसके मन के विचारों को पढ़ सकते थे और उसकी पूरी जीवन-चर्या से परिचित थे।

"हाँ," उपेन्द्र ने स्वीकार किया, "लेकिन मैं..."

प्रभुपाद ने बीच में टोका, "यह ठीक नहीं।"

"स्वामीजी, मैं कोई यौन-सम्बन्ध नहीं रखता।"

"जहाँ कोई लड़का रहता है और उसके साथ एक लड़की रहती है, वहाँ यौनाचार होता है।" प्रभुपाद ने कहा, "तुम आओ और मेरे साथ रहो।"

उपेन्द्र प्रसन्न हो गया, "हाँ, मैं तुरन्त आऊँगा।"

उसने अपने कमरे से कुछ सामान लिया, बाकी के सामान को अपनी मित्र लड़की के लिए छोड़ दिया और प्रभुपाद के सामने वाले कमरे में आ गया। अब वह प्रभुपाद का व्यक्तिगत सेवक बन गया था।

प्रभुपाद ने उससे डाकखाने की अपनी नौकरी बनाए रखने को कहा। आधी रात के लगभग ज्योंही नौकरी पर काम खत्म होता, उपेन्द्र अपने कमरे में लौट आता था। (प्रभुपाद उसके लिए दरवाजे में ताला नहीं लगाते थे।) सामान्य रूप से दरवाजे में ताला लगाने और सोने के बेग में घुसकर सो जाने के बाद उपेन्द्र की नींद तब टूटती जब प्रभुपाद *टीचिंग्स आफ लार्ड चैतन्य* की रचना के लिए अपनी डिक्टेशन लेने वाली मशीन के सामने बैठकर बोलने लगते थे। उपेन्द्र फिर नींद में डूब जाता और छह बजे तक सोता रहता।

उपेन्द्र को अपने आध्यात्मिक गुरु के इस साहचर्य में आनन्द आया और वह सदा प्रसन्न रहने लगा। "मैं केवल स्वामीजी का कुत्ता होना चाहता हूँ।" वह अन्य भक्तों से प्राय: कहा करता।

एक बार उपेन्द्र अकेले में *श्रीमद्‌भागवत* पढ़ रहा था :

> श्रील शुकदेव गोस्वामी के मुख से सारी कथा इस प्रकार प्रस्तुत की गई है कि कोई भी सच्चा श्रोता, जो विनम्र भाव से दिव्य लोक का सन्देश सुनेगा, तत्काल इस भौतिक संसार के विकृत सुखों से भिन्न इन्द्रियातीत आनन्द की अनुभूति करेगा। कृष्ण लोक के उच्चलोक से यह परिपक्व फल इस पृथ्वी पर अकस्मात् नहीं आ गिरा है, वरन् वह गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा सँभालकर, मृदुता और परिपक्वता में बिना किसी परिवर्तन अथवा विकार के यहाँ लाया गया है।

"तुम्हारे पास कोई प्रश्न नहीं है?" प्रभुपाद ने पूछा।

उपेन्द्र ने पुस्तक से दृष्टि हटाकर ऊपर देखा : "नहीं स्वामीजी, मैं हर बात को जो आप कहते हैं, स्वीकार करता हूँ।" प्रभुपाद अपनी घूमने वाली कुर्सी में जोर से झूमने और मुसकराने लगे। उपेन्द्र फिर पढ़ने लगा। प्रभुपाद ने उपेन्द्र को पढ़ते समय पुस्तक पकड़ने का सही ढंग बताया—दोनों हाथों की हथेलियाँ ऊपर की ओर गोद से अलग होनी चाहिए। इससे उपेन्द्र को और भी उत्साह हुआ कि वह उनकी पुस्तकें पढ़कर अपने आध्यात्मिक गुरु को प्रसन्न करे।

यौन-वासनाएँ उपेन्द्र को अब भी परेशान कर रही थीं। उसके मन में आया कि शायद विवाह कर लेना चाहिए। परन्तु उसके लिए स्पष्ट नहीं था कि कृष्ण-चेतना का विवाह कैसा होता है। वह यह सोचकर परेशान था कि उस लड़की से विवाह कैसे हो सकता है, जिससे प्यार न हो। और बिना यौनाचार किए किसी लड़की से प्रेम कैसे किया जा सकता है? इस विषय में वह स्वामीजी से पूछना चाहता था, लेकिन उसने प्रश्न को अपने तक रखा, अवसर की प्रतीक्षा में और साहस होने तक। तब वह एक दिन प्रभुपाद के कमरे में घुसा, जब प्रभुपाद कमरे के एक सिरे से, जिस ओर फ्रेडरीक स्ट्रीट में झाँकती हुई तीन खिड़कियाँ थीं, दूसरे सिरे तक, जहाँ उनकी कुर्सी रखी थी, चक्कर लगा रहे थे। अब उपेन्द्र ने निश्चय किया कि वह अपना प्रश्न पूछ सकता है।

"स्वामीजी," उसने कहा, "क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूँ?"

"हाँ," श्रील प्रभुपाद ने घूमना बन्द करते हुए कहा।

"यदि कोई लड़का लड़की से अलग है, तो वह उसके साथ प्रेम करना कैसे सीख सकता है?"

प्रभुपाद ने जप करते और माला फेरते हुए आगे पीछे घूमना फिर शुरू कर दिया। एक क्षण के बाद वे मुड़े और मृदुता के साथ बोले, "प्रेम? प्रेम कृष्ण के लिए है।" और वे खिड़की की ओर बढ़े और नीचे सड़क पर देखने लगे। "तुम एक लड़की चाहते हो? एक को चुन लो।" उन्होंने सड़क से गुजरती कुछ स्त्रियों की ओर संकेत किया। "इस भौतिक संसार में प्रेम नहीं है," उन्होंने कहा, "प्रेम कृष्ण के लिए है।"

धीरे-धीरे श्रील प्रभुपाद के पवित्र प्रभाव में उपेन्द्र को यौन-कामनाएँ कम सताने लगीं। उसकी समझ में आ गया कि वह भौतिक शरीर नहीं, वरन् आध्यात्मिक आत्मा है और आत्मा की शाश्वत प्रकृति कृष्ण-प्रेम ही है। और प्रेम स्वामीजी जैसे शुद्ध भक्त के लिए, कृष्ण के लिए ही होता है।

उपेन्द्र अधिकाधिक स्वामीजी का सेवक बनना चाहता था। वह सोचता रहता कि उनके लिए भोजन की क्या चीजें खरीदी जायें और उनका जीवन अधिक सुविधाजनक कैसे बनाया जाये। स्वामीजी की सेवा की ऐसी इच्छा से प्रेरित होकर उपेन्द्र एक दिन मनोवैज्ञानिक दुकान में गया। उसने सुना था कि दुकान में कुछ चित्र भारत से हाल ही में आए हैं, अतः वह अन्दर गया और चित्रों को उलट-पलट करके देखने लगा; उसने भगवान् कृष्ण के कुछ चित्र चुने और उन्हें वह स्वामीजी के पास ले गया।

प्रभुपाद के कमरे में अन्य भक्तों के साथ उपेन्द्र ने चित्रों को प्रभुपाद के डेस्क पर रखकर उन्हें एक-एक करके खोला। वह देखता रहा कि प्रभुपाद की प्रतिक्रिया क्या होती है। उसे ऐसा लगा जैसे स्वामीजी अपने व्यक्तिगत मित्र के चित्रों को देख रहे हों। वे चित्रों

से प्रसन्न थे। हयग्रीव ने टिप्पणी की कि भारतीय चित्रों में प्रदर्शित धार्मिक कला कुछ भोंडी होती है। किन्तु प्रभुपाद ने समझाया कि टेक्नीक से कोई फर्क नहीं पड़ता। महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि चित्र कृष्ण के थे और उनकी रचना वैदिक वर्णनों के अनुसार हुई थी। भक्त के लिए वे सुन्दर थे और कृष्ण से अभिन्न थे।

प्रभुपाद ने अपनी पसन्द का वह चित्र चुना, जिसमें कृष्ण भगवान् चन्द्रिका चर्चित रात्रि में खड़े वंशी बजा रहे हैं और बगल में यमुना नदी प्रवाहित है। इस चित्र में कृष्ण का नाम गोविन्द रखा गया था। प्रभुपाद ने चित्र ऊपर उठाया और एक श्लोक उद्धृत किया :

स्मेरां भंगी-त्रय-परिचितां साची-विस्तीर्ण-दृष्टिम्
वंशी-न्यस्ताधर किशलयां उज्जवलां चन्द्रकेण।
गोविन्दरव्यां हरि-तनुं इतः केशी- तीर्थोपकंठे
मा प्रेक्षिष्ठास तव यदि सखे बंधु सङ्गेऽस्ति रंगः॥

तब उन्होंने कागज का एक टुकड़ा लिया और उस पर लिखने लगे। भक्त उन्हें ध्यानपूर्वक देखते रहे और कागज पर कलम के चलने की आवाज सुनते रहे। तब उन्होंने ऊँचे स्वर में पढ़ा : "मेरे प्रिय मित्र, यदि अब भी आप की रुचि भौतिक जीवन, समाज, मैत्री और प्रेम का सुख भोगने की ओर है, तो उस बालक को कृपा करके मत देखिए, जिसका नाम गोविन्द है, जो त्रिभंगी-मुद्रा में मुसकराता हुआ चन्द्रिका-स्नात अधरों से कुशलतापूर्वक वंशी बजा रहा है।"

"यमुना, तुम इसे अच्छी तरह लिख सकती हो?" प्रभुपाद जानते थे कि यमुना सुलेख में प्रशिक्षित थी। उन्होंने उससे ऊपर का श्लोक लिखकर चित्र के साथ मन्दिर में उनके बैठने के स्थान के निकट टाँगने को कहा। वे कीर्तन के बीच चित्र को देखते रहना चाहते थे।

उपेन्द्र को विचार आया और वह प्रार्थना करने लगा, "यदि मैं अपने आपको स्वामीजी की, जो कृष्ण में इतने अनुरक्त हैं, सेवा में निरन्तर लगा सकूँ तो मैं भी आध्यात्मिक बन जाऊँगा।" उसे लगा कि चूँकि उसके लिए सम्भव नहीं था कि वह गोविन्द को उस रूप में देख सके, जिस रूप में स्वामीजी देखते थे, इसलिए उसे चाहिए कि वह गोविन्द के सच्चे भक्त, स्वामीजी की सेवा करे और उस ढंग से पवित्र बने। "मैं केवल स्वामीजी का कुत्ता बनना चाहता हूँ।" कमरे से जाते हुए उपेन्द्र ने कहा।

• • •

न्यूयार्क में लड़कों को आदेश था कि जब तक क्रय का संविदापत्र तैयार न हो जाये, वे श्रीमान् प्राइस को और अधिक धन न दें। प्रभुपाद मकान अब भी चाहते थे। ४ मार्च को उन्होंने ब्रह्मानंद को लिखा था, "मुझे आशा है कि जब मैं अगली बार न्यूयार्क आऊँगा, तो मैं सीधे नए मकान में प्रवेश करूँगा।" और रायराम को उन्होंने ७ मार्च को लिखा था, "मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि ब्रह्मानन्द, तुम और अन्य भक्त कृष्ण के निमित्त सभी खतरे लेने के लिए दिव्य साहस रखते हो। इससे कृष्णभावनामृत में तुम्हारे सुयश में वृद्धि होगी।" किन्तु प्रभुपाद चाहते थे कि उनके शिष्य झूठे वादों के कारण धोखे में न पड़ें।

इस बीच, श्रीमान् प्राइस भक्तों से कह रहे थे कि वे श्रीमान् हाल को, जो श्रीमान् प्राइस के वित्तीय मित्र थे, ५०००/- डालर दे दें, जिससे श्रीमान् हाल उसमें २०,०००/- डालर अपनी ओर से जोड़कर मकान-मालिक श्रीमान् टाइलर को भुगतान कर सकें। श्रीमान् प्राइस चाहते थे कि ब्रह्मानंद महामहिम प्रभुपाद को यह बात स्पष्ट रूप में लिख दें कि सौदा इसी ढंग से और अविलम्ब होना है, यदि सचमुच मकान खरीदने की उनकी इच्छा हो।

ब्रह्मानंद ने प्रभुपाद को लिखा और उनसे प्रार्थना की कि वे बैंक से लड़कों के, जो इस्कान के ट्रस्टी थे, खाते में ५०००/- डालर ट्रांसफर करा दें। प्रभुपाद ने अनुमति दे दी और कहा कि चेक पर हस्ताक्षर अध्यक्ष और सचिव करें, क्योंकि, "ब्रह्मानंद और सत्स्वरूप इस मकान के खरीदने में मुख्य स्तंभ हैं और पाकशाला विभाग के कीर्तनान्द ने पूरक की भूमिका निभाई है।" किन्तु उन्होंने कहा कि चेक मकान के विक्रेता श्रीमान् टाइलर के नाम में होना चाहिए, वित्तीय सहायक श्रीमान् हाल के नाम में नहीं। "धन और संघ आप लोगों का है," प्रभुपाद ने स्वीकार किया, "आप धन जिस तरह चाहें खर्च कर सकते हैं, लेकिन सदा शुभेच्छु के रूप में परामर्श देना मेरा कर्तव्य है।"

तब श्रीमान् प्राइस ने ब्रह्मानन्द को श्रीमान् हाल से मिलने के लिए आमंत्रित किया और सुझाव दिया कि वे ५०००/-डालर के चेक के साथ आएँ। मार्ग में श्रीमान् प्राइस ने बताया कि श्रीमान् हाल मैनहट्टन के कदाचित् जायदाद के सबसे बड़े व्यापारी थे—वे करोड़पति थे। उनके पास गगनचुंबी मकान थे। उनके पास जो कुछ था वह सभी बड़ा था, महान् था। जब ब्रह्मानन्द श्रीमान् हाल के कार्यालय में प्रविष्ट हुए, तो उन्हें लगा मानो वह हालीवुड चलचित्र का कोई भाग हो। उसका कांफ्रेंस हाल सेकंड एवन्यू मन्दिर-कक्ष से दस गुना बड़ा था। उसमें अंडाकार मेज के सिरहाने श्रीमान् हाल स्वयं बैठे थे। कमरा धुँधलके में डूबा था। केवल श्रीमान् हाल पर प्रकाशपुंज पड़ रहा था और वे टेलीफोनों से घिरे बैठे थे। उनके बीच वार्तालाप शुरू होने पर भी श्रीमान् हाल बीच में कई बार रुके, टेलीफोन उठाकर देश के आर-पार के लोगों से बात करने के लिए।

"नौजवान," श्रीमान् हाल ने ब्रह्मानंद से कहा, "हम मकान देने में तुम्हारी मदद कर रहे हैं। यह एक खूबसूरत मकान है, न्यूयार्क शहर में महत्त्वपूर्ण सीमा चिह्न।" तब श्रीमान् हाल की एक मित्र लड़की का फोन केरेबियन की एक नौका से आया। वे कुछ समय तक उससे बात करते रहे, उसके बाद कान्फ्रेंस टेबल पर अर्धप्रकाश में बैठे ब्रह्मानंद और श्रीमान् प्राइस की ओर मुड़े।

श्रीमान् हाल के पास एक बड़ा संविदा पत्र था, जिस पर वे ब्रह्मानंद के हस्ताक्षर चाहते थे। ब्रह्मानंद जानता था कि स्वामीजी संविदा-पत्र चाहते थे और वहाँ वह मौजूद था। वह यह भी जानता था कि यदि वह ५०००/- डालर के संविदा-पत्र पर हस्ताक्षर कर देता है, तो उसके पास अतिरिक्त धन नहीं रह जायेगा और न ही कोई अतिरिक्त आय होगी और उसे मालूम था कि वे इसे जानते थे। किन्तु स्वामीजी मकान चाहते थे। स्वामीजी ने स्वंय १,००,०००/- डालर के मकान देखे थे और उन्हें खरीदने को तैयार थे, यद्यपि उनके पास उतना धन नहीं था। और ब्रह्मानंद हमेशा वही करता था, जो स्वामीजी कहते थे। ब्रह्मानंद इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि इस संविदापत्र पर हस्ताक्षर करना स्वामीजी और कृष्ण में विश्वास का कार्य होगा। विश्लेषण करके उसने अपने से यह नहीं पूछा, "शेष धन कहाँ से आएगा?" उसने सोचा ऐसा करना स्वामीजी में सन्देह करने के बराबर होगा।

इस तरह वह अपने समय के एक बड़े वित्तदाता के कार्यालय में था। यह विस्मयाकुल था। लाखपति उसकी सहायता करने को तैयार थे। श्रीमान् प्राइस ब्रह्मानंद की बगल में बैठे थे। श्रीमान् हाल ब्रह्मानंद से कह रहे थे कि सब कुछ ठीक था, "हम आपको यह मकान दिला रहे हैं।" सचमुच अब यह होने जा रहा था। मैनहट्टन का एक महान् पुरुष उनकी सहायता कर रहा था। और यद्यपि ब्रह्मानंद के पास धन नहीं था, श्रीमान् हाल मकान को उसके मालिक से आसानी से प्राप्त कर सकेंगे। संविदापत्र पर शीघ्रतापूर्वक दृष्टि डालते हुए ब्रह्मानंद ने उस पर हस्ताक्षर कर दिए। सौदा हो चुका था और उसने ५०००/- का चेक उन्हें दे दिया।

ज्योंही ब्रह्मानंद और श्रीमान् प्राइस श्रीमान् हाल के कार्यालय से बाहर आए श्रीमान् प्राइस में स्पष्ट बदलाव आ गया। यद्यपि वे अब भी ब्रह्मानंद के मित्र होने का नाटक कर रहे थे, अब उन्होंने कहा, "हीं, आप जानते हैं, आपको इतने रुपयों की व्यवस्था करनी है।" नगर की ऊपरी सड़क पर चलते हुए श्रीमान् प्राइस ने हँसते हुए सारा दायित्व ब्रह्मानंद पर डाल दिया। यही बदलाव था; पहले श्रीमान् प्राइस कहते थे कि वे और श्रीमान् हाल सब कुछ करेंगे, अब वे कहने लगे कि भक्तों को ही सब कुछ करना था। ब्रह्मानंद ने कानूनी स्थिति के बारे में पूछा। श्रीमान् प्राइस ने कहा कि जिम्मेदारी केवल कृष्ण-संघ पर थी। किन्तु वादों के बारे में उन्हें क्या कहना था? श्रीमान् हाल के इतना धनाढ्य होने और

उनके और श्रीमान् हाल के सहायता करने की तत्परता के बारे में क्या कहना था? श्रीमान् प्राइस ने ब्रह्मानंद को विश्वास दिलाया कि वे और श्रीमान् हाल सहायता करना चाहते थे। वे लोग वह सब कुछ कर रहे थे, जो वे कर सकते थे। लेकिन ब्रह्मानंद और अन्य भक्तों को हर सम्भव प्रयत्न करना चाहिए कि वे भुगतान पूर्ण करने के लिए महीने के अन्त तक २०,०००/- डालर की व्यवस्था करें। और यदि वे न कर सकें, तो? श्रीमान् प्राइस ने बहुत स्पष्ट कहा—"यदि आप शेष धन महीने-भर में नहीं अदा करते, तो आप जमा किया हुआ धन खो देंगे।"

२६ सेकंड एवन्यू पहुँचने तक ब्रह्मानंद को अनुभव हो गया कि उसके साथ धोखा किया गया है। वह हताश हो गया। वह अन्य भक्तों के पास गया और जो कुछ हुआ था, उन्हें बताया। लेकिन उनका यही कहना था, "तुमने ऐसा क्यों किया?" ब्रह्मानंद ने श्रील प्रभुपाद को सैन फ्रांसिस्को फोन किया। श्रीमान् प्राइस के बारे में उसकी आँखें खुल गई थीं, इसलिए उसने अपनी भूल निस्संकोच स्वीकार की और प्रभुपाद को बताया कि वह ५०००/- डालर दे चुका था।

"क्या यह सब गया?" श्रील प्रभुपाद ने पूछा।

"हाँ," ब्रह्मानन्द ने उत्तर दिया। उसे सुनाई दिया कि प्रभुपाद ने टेलीफोन रख दिया। ब्रह्मानंद अपनी ओर से पूरी व्याख्या देना चाहता था, लेकिन स्वामीजी ने बिना कुछ कहे टेलीफोन रख दिया था। ब्रह्मानंद ने रिसीवर हुक पर रख दिया। वह घबराया हुआ था।

अगले दिन ट्रस्टियों ने एक विशेष बैठक की। सभी लड़के प्रभुपाद के आवास के सामने वाले कमरे में यह निर्णय करने बैठे कि क्या करना है। गर्गमुनि ने प्रभुपाद से फिर बात की; उन्होंने बैंक से चेक रुकवा देने की राय दी। "स्वामीजी लोमड़ी की तरह चालाक हैं।" कहकर रायराम मुसकराया। गर्गमुनि ने बैंक को फोन किया। लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। चेक का भुगतान हो चुका था।

भक्तों ने श्रीमान् गोल्डस्मिथ से राय ली, जो उनके मित्रवत् वकील थे। उन्होंने कहा कि केस कानून की दृष्टि से कमजोर लग रहा है। प्राइस और हाल ने कानूनन यह जिम्मेदारी नहीं ली थी कि भुगतान देने में भक्तों के असफल होने पर उन्हें कुछ लौटाना था। और यदि भक्त महीने के अन्त तक शेष २००००/- डालर नहीं दे सके, तो वे अपनी ५०००/- डालर की जमा की हुई राशि खो बैठेंगे। धोखे के लिए वे मुकदमा चला सकते थे, लेकिन कोर्ट-फीस भारी थी।

तब एक-एक करके ब्रह्मानंद, सत्स्वरूप, कीर्तनानन्द, रायराम और अन्यों ने प्रभुपाद के पत्रों को पलटना शुरू किया, जिसमें उन्होंने धोखे से बचने के लिए सावधान किया था। उन्होंने अनुभव किया कि प्रभुपाद के आदेशों को न मानना वही उनकी सबसे बड़ी भूल

थी। उन्होंने कहा था कि इन व्यवसायियों के वादों पर भरोसा न किया जाये और उन्होंने कहा था कि चेक केवल मकान-मालिक के नाम में काटा जाये, वित्तदाता के नाम में नहीं।

कुछ दिन के अन्दर भक्तों के पास उनके गुरु महाराज के अन्य आदेश डाक से पहुँचे। उन में ताड़नाएँ थी। किन्तु उनसे सन्देश प्राप्त करना, चाहे उसमें डांट-फटकार ही क्यों न हो, इस पीड़ा से अच्छा था कि बिना कुछ कहे ही वे टेलीफोन रख दें। "तुमने मेरे आदेशों का पालन नहीं किया और अब कठिनाई में हो।" उन्होंने लड़कों को लिखा।

उन्होंने रायराम को लिखा :

> तुम सभी लड़के मूर्ख हो। मैंने बार-बार तुमको आगाह किया था और अन्त में भी आगाह किया था कि हमें चेक नहीं देना है, जब तक कि श्रीमान् टाइलर और श्रीमान् हाल के बीच संविदापत्र तैयार न हो जाये। संविदापत्र पर हस्ताक्षर इस तरह हुए, जैसे किसी विवाह का उत्सव दूल्हे की उपस्थिति के बिना ही हो। गलती तो हुई ही है और अब तुम सब पश्चात्ताप कर रहे हो।

सत्स्वरूप को उन्होंने लिखा :

> तुमने मुझसे पूछा है कि क्या सैन फ्रांसिस्को की शाखा मकान खरीदने के लिए कुछ रकम दे सकेगी। लेकिन वह मकान कहाँ है और उसका क्रय कहाँ हुआ है ? अब तक सिर्फ श्रीमान् प्राइस और उनके गुट की बातें हुई है, जिनमें तुम सब अबोध बालक फँस गए हो। मेरी समझ में नहीं आता कि इस महान् भूल में मैं तुम लोगों की मदद कैसे कर सकता हूँ। मुझे केवल यही आशा है कि कृष्ण तुम्हारी मदद करेंगे।

भक्तों और उनके वकीलों की राय से भिन्न, प्रभुपाद का विचार था कि व्यवसायियों के विरुद्ध उनका केस बहुत मजबूत था।

> मैं वकील नहीं हूँ, लेकिन यह आम समझ का मामला है। श्रीमान् हाल ने रकम ली है और मकान खरीदने के लिए उन्हें वित्तीय सहायता करनी ही चाहिए। यदि वित्तीय सहायता के लिए उनके पास रकम नहीं है, तो यह कोरी और स्पष्ट धोखाधड़ी है।

उनका कहना था कि अभियुक्तों को आपराधिक न्यायालय में पेश किया जाना चाहिए। उनका षड्यंत्र और धोखाधड़ी स्पष्ट है और इसे सिद्ध किया जा सकता था।

> ब्रह्मानंद से टेलीफोन पर जो वार्ता हुई उससे ऐसा लगता है कि यह नियोजित धोखाधड़ी का मामला है और तुम्हें इसका सामना साहस के साथ, बिना किसी को क्षमा किए हुए करना चाहिए। हम में प्रतिकार की भावना नहीं है, लेकिन हम कृष्ण के धन को व्यर्थ में नहीं खोना चाहते।

लड़कों से इतनी भयंकर भूल हो चुकी थी कि प्रभुपाद को सन्देह हो गया था कि वे प्रवंचको से निबट सकेंगे। लेकिन उन्होंने कहा कि उन्हें कोशिश करनी चाहिए, "हमें या मकान लेना है या रकम वापस लेनी है। अन्यथा यह धोखाधड़ी का मामला है। अब तुम लोग जैसा चाहो, वैसा करो।"

श्रील प्रभुपाद ने भक्तों के वकीलों को लिखा और केस का पूरा इतिहास बताया। उन्होंने एक पत्र वित्तदाता, मकान-मालिक और श्रीमान् प्राइस को भी लिखा। उन्होंने हर चीज खोलकर रख देने की धमकी दी थी; उसमें वह चीज भी शामिल थी, जिसे अकेले वे ही जानते थे और वह यह थी कि सम्बन्धित वकील भी इस धोखाधड़ी में शामिल थे। ब्रह्मानंद की समझ में नहीं आ रहा था कि यह सब क्या हो रहा था, लेकिन ऐसा लगता था कि स्वामीजी कुछ नतीजा निकालने जा रहे थे। लड़के निश्चय ही मूर्ख थे, लेकिन व्यवसायी भी निश्चय ही प्रवंचक थे। और स्वामीजी का दावा था कि वे इसे न्यायालय में साबित कर देंगे।

भूल करने वाले शिष्यों को ताड़ना देते और धोखेबाजों पर बुरी तरह क्रुद्ध होते हुए भी श्रील प्रभुपाद अपने मूर्ख बालकों के लिए परम आश्रय थे। न्यूयार्क शाखा के छह ट्रस्टियों को लिखे गए पत्र में उन्होंने उनके उदास मनों में दिव्य प्रकाश विकीर्ण किया।

> इस प्रकरण को भूल जाओ। इसे पक्की बात मान लो कि जान-बूझकर की गई तुम लोगों की मूर्खता के कारण कृष्ण ने यह धन तुम लोगों से ले लिया है। भविष्य में बहुत सावधान रहो और कृष्ण की आज्ञा का पालन करो। यदि तुम कृष्ण की आज्ञा का पालन करोगे, तो वे तुम्हें तुम्हारी आवश्यकता की हर चीज देंगे। प्रसन्न रहो और बिना किसी दुख के हरे कृष्ण का जप करो। जैसाकि मैं तुम लोगों को कई वार बता चुका हूँ, मेरे गुरु महाराज कहते थे कि यह संसार सज्जनों के लिए नहीं है। उनकी उक्ति का समर्थन *श्रीमद्भागवत* के निम्नांकित श्लोक से होता है।

वह इस प्रकार है :

यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिञ्चना
सर्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुराः।
हरावभक्तस्य कुतो महद्गुणा
मनोरथेनासति धावतो बहिः॥

"जिस व्यक्ति में कृष्ण-चेतना नहीं है, उसमें सद्गुण नहीं हो सकते। कोई व्यक्ति कितना भी सज्जन क्यों न कहा जाता हो और वह चाहे कितना भी शिक्षा-प्राप्त क्यों न हो, वह मानसिक-जगत में भटकता रहता है और इसलिए बाह्य शक्ति से प्रभावित होने के कारण वह उत्पात करने में लीन रहता है। दूसरी ओर, जो व्यक्ति परमात्मा में अचल विश्वास रखता है, उसमें देवताओं के सभी गुण विद्यमान रहते हैं।" अतः तुम लोगों को संसार के तथाकथित सज्जनों पर विश्वास नहीं करना चाहिए, चाहे वे कितनी भी सुन्दर वेश-भूषा से अलंकृत क्यों न हों। कृष्ण-चेतना के प्रसार के अभियान में हमें अनगिनत तथाकथित सज्जन मिलेंगे, किन्तु हमें उनसे व्यवहार करने में वैसे ही सावधान रहना चाहिए, जैसे कि साँप से निबटने में।

न्यूयार्क के लड़के अब स्वामीजी की वापसी पहले से भी अधिक चाहने लगे थे। यद्यपि मन्दिर में अधिकतर बातचीत अब भी उस मकान के बारे में होती थी, पर नियमित कीर्तन और व्याख्यान का कार्यक्रम भी चलता रहता था। दो नए लड़के भी संघ में सम्मिलित हो गए थे। जदुरानी ने भगवान् विष्णु के कुछ नए चित्र तैयार कर लिए थे, जो अब मन्दिर में लटक रहे थे। वह उत्सुकता से स्वामीजी के लौटने की प्रतीक्षा कर रही थी, ताकि वे आएं और उन चित्रों को देखें। कुछ भक्तों ने मन्दिर में व्याख्यान देने के स्थान पर स्वामीजी के लिए एक नए आसन का निर्माण किया था। वे जानते थे कि वे मूर्ख थे, परन्तु उन्होंने स्वामीजी से प्रार्थना की कि कृपा करके वे वापस आएँ। स्वामीजी राजी हो गए। न्यूयार्क वापसी के लिए उन्होंने ९ अप्रैल की तिथि निश्चित की। इस बीच सैन फ्रांसिस्को में उन्हें बहुत कुछ करना था।

• • •

एक दिन मालती शीघ्रतापूर्वक श्रील प्रभुपाद के कमरे में आई। उसने अपने खरीददारी के थैले से एक छोटी-सी चीज निकाली और प्रभुपाद के निरीक्षण के लिए उनकी मेज पर रख दी; उसने पूछा, "यह क्या है, स्वामीजी ?"

श्रील प्रभुपाद ने उधर दृष्टि की और एक तीन इंच की लकड़ी की गुड़िया देखी।

उसका सिर चपटा था, चेहरा मुसकराता हुआ श्याम-वर्ण का था और आँखें बड़ी बड़ी और गोल थीं। उसकी बाहें गोल मटोल आगे बढ़ी हुई थीं, धड़ साधारण हरे और पीले रंग का था, जिसमें पैर नहीं दिखाई दे रहे थे। श्रील प्रभुपाद ने मूर्ति को सम्मान अर्पित करने के लिए तुरन्त हाथ जोड़ दिए और अपना सिर झुका दिया।

"तुम भगवान् जगन्नाथ को लाई हो, ब्रह्मांड के स्वामी को।" उत्फुल्ल नेत्रों से उन्होंने मुसकराते हुए कहा। "वे कृष्ण हैं, तुम्हें बहुत बहुत धन्यवाद।" श्रील प्रभुपाद प्रसन्नता से खिल उठे थे, जब कि मालती और अन्य लोग अपने आपको धन्य समझ रहे थे कि वे प्रभुपाद को इतना प्रसन्न देख रहे हैं। प्रभुपाद ने समझाया कि यह भगवान् जगन्नाथ हैं, जो कृष्ण का एक विग्रह है और हजारों वर्षों से सारे भारत में पूजे जाते हैं। उन्होंने कहा कि जगन्नाथ की पूजा दो अन्य विग्रहों के साथ होती है : एक उनके भाई बलराम हैं और दूसरी उनकी बहिन सुभद्रा हैं।

भावविभोर होकर मालती ने पुष्टि की कि *कास्ट प्लस* के आयात-भंडार में, जहाँ उसने जगन्नाथ का लघु विग्रह पाया था, उस तरह के और भी विग्रह थे। श्रील प्रभुपाद बोले कि उसे वहाँ जाना चाहिए और उन्हें खरीद लेना चाहिए। मालती ने अपने पति श्यामसुन्दर से कहा और वे दोनों शीघ्रतापूर्वक वहाँ गए और उस सेट के शेष दो विग्रहों को खरीद लाए।

श्रील प्रभुपाद ने श्याममुख, मुसकराते हुए जगन्नाथ को दाईं ओर रखा। बीच में उन्होंने सुभद्रा का विग्रह रखा जो सबसे छोटा था। उसका मुख लाल वर्ण का मुसकराता हुआ था और धड़ चौकोर काले और पीले वर्ण का था। तीसरा विग्रह भगवान् बलराम का था। उनका सिर श्वेत और गोल था, नेत्र लाल पलकों वाले थे, मुख पर प्रसन्न लाल मुसकान थी, बांहे जगन्नाथ की भाँति आगे बढ़ी हुई थीं, धड़ नीला और पीला था। प्रभुपाद ने बलराम को सुभद्रा की बगल में रखा। जब प्रभुपाद ने अपनी डेस्क पर स्थापित तीनों विग्रहों पर दृष्टिपात किया, तो उन्होंने पूछा कि क्या कोई मूर्ति तराशना जानता था। श्यामसुन्दर ने कहा कि वह काष्ठ-शिल्पी था। प्रभुपाद ने उसे जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा की वैसी ही तीन फुट ऊँची अनुकृतियाँ बनाने को कहा।

प्रभुपाद ने उन्हें बताया कि दो हजार वर्ष से अधिक पूर्व भगवान् कृष्ण का भक्त इन्द्रद्युम्न नाम का एक राजा था। महाराज इन्द्रद्युम्न भगवान् की एक ऐसी प्रतिमा चाहता था, जिस में यह संकेत होता हो कि सूर्यग्रहण के समय वे, उनके भाई और बहन एक साथ रथ में बैठकर पवित्र कुरुक्षेत्र जा रहे हों। जब राजा ने देवलोक के प्रसिद्ध शिल्पी विश्वकर्मा से ऐसी प्रतिमाएँ बनाने की प्रार्थना की, तो विश्वकर्मा सहमत हो गया—शर्त केवल यह थी कि बीच में कोई उसके कार्य में हस्तक्षेप न करे। राजा लम्बे समय तक प्रतीक्षा करता रहा,

जबकि विश्वकर्मा बन्द कमरे के अन्दर प्रतिमाएँ बनाने के अपने कार्य में लगा रहा। एक दिन राजा को लगा कि अब वह अधिक प्रतीक्षा नहीं कर सकता और वह कार्य की प्रगति देखने के लिए कमरे में घुस गया। अपनी बात का पक्का विश्वकर्मा अदृश्य हो गया और तीनों प्रतिमाएँ अधूरी छोड़ गया। किन्तु राजा कृष्ण, बलराम और सुभद्रा की अद्‌भुत अधूरी प्रतिमाओं से अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने जैसी वे थीं, उसी रूप में उनकी पूजा करने का निर्णय किया। उसने एक मन्दिर में उनकी स्थापना की और वैभवपूर्ण ढंग से वह उनकी पूजा करने लगा।

श्रील प्रभुपाद ने आगे बताया कि उसी समय से भगवान् जगन्नाथ की पूजा सारे भारत में होती आई है, विशेषकर उड़ीसा प्रदेश में, जहाँ पुरी नगरी में भगवान् जगन्नाथ का एक विशाल मन्दिर है। हर वर्ष पुरी नगरी में रथयात्रा के विशाल उत्सव के अवसर पर सारे भारत से लाखों लोग भगवान् जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा की पूजा के लिए आते हैं, जबकि इनका जुलूस विशाल रथों में निकलता है। भगवान् चैतन्य, जिन्होंने अपने जीवन के अन्तिम १८ वर्ष जगन्नाथ पुरी में बिताए, वार्षिक रथयात्रा के उत्सव में भगवान् जगन्नाथ के विग्रह के सम्मुख भावविभोर होकर नाचा और गाया करते थे।

भगवान् जगन्नाथ का सैन फ्रांसिस्को में यह आविर्भाव प्रभुपाद को कृष्ण की इच्छा जैसा दिखाई दिया। उन्होंने अपने शिष्यों को सावधान किया कि भगवान् जगन्नाथ की अगवानी और पूजा समुचित रूप में होनी चाहिए। प्रभुपाद ने कहा कि यदि श्यामसुन्दर प्रतिमाएँ तिराश सके, तो वे उनकी स्थापना मन्दिर में स्वयं कर देंगे और तब भक्तगण प्रतिमाओं की पूजा-आराधना शुरू कर सकते थे। उन्होंने कहा कि सैन फ्रांसिस्को का नया नाम नवीन जगन्नाथ पुरी रखा जा सकता है। वे जपने लगे, *"जगन्नाथ स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।"* वे बोले "यह भगवान् जगन्नाथ का मंत्र है। जगन्नाथ का अर्थ है विश्व के स्वामी। हे विश्व के स्वामी, कृपा करके मुझे दर्शन दें। यह बहुत शुभ है कि आप यहाँ प्रकट हुए हैं।"

श्यामसुन्दर ने सख्त लकड़ी के तीन ब्लाक खरीदे और प्रभुपाद ने उन पर रूपरेखाएँ बना दीं और विवरण की अन्य कई बातें बता दीं। छोटी प्रतिमाओं का सहारा लेकर श्यामसुन्दर ने अनुपात निकाला और नए माप स्थिर किए : फिर अपने कमरे की बालकनी पर बैठकर वह प्रतिमाएँ तराशने में लग गया। इस बीच भक्तजन *कास्ट प्लस* से शेष लघु जगन्नाथों को खरीद लाए और एक साधारण माला में लघु जगन्नाथ को पिरोकर गले में धारण करने का एक फैशन चल निकला। श्रील प्रभुपाद ने समझाया कि चूँकि भगवान् जगन्नाथ पतित से भी पतित लोगों के प्रति बहुत उदार और कृपालु हैं, इसलिए शीघ्र ही भक्तजन अपने मन्दिर में उनकी पूजा कर सकेंगे। मन्दिर में राधा और कृष्ण के विग्रहों की

पूजा-अर्चना बहुत ऊँचे और कठोर नियमों की अपेक्षा रखती है। भक्तजन अभी तक उनकी पूर्ति नहीं कर पाते थे। परन्तु भगवान् जगन्नाथ इतने कृपालु हैं कि उनकी पूजा सामान्य ढंग से (साधारण रूप से हरे कृष्ण गाकर) हो सकती थी, चाहे भक्तजन बहुत उन्नत न हों।

प्रभुपाद ने भगवान् चैतन्य के आविर्भाव दिवस, २६ मार्च को विग्रहों की प्राण-प्रतिष्ठा के लिए निश्चित किया। उस दिन भक्तों को बड़े पैमाने पर भोजन मिलने को था और तब भगवान् जगन्नाथ की पूजा आरम्भ होने को थी। प्रभुपाद ने कहा कि भक्तों को एक वेदी बनानी होगी और उन्होंने समझाया कि वह कैसे तैयार की जायेगी।

श्यामसुन्दर प्रतिमाएँ बनाने में इतनी शीघ्रता कर रहा था कि एक लकड़ी की फांस उसके हाथ में धँस गई और घाव पक गया। अन्त में श्यामसुन्दर का रक्त विषाक्त हो गया और वह इतना बीमार पड़ गया कि उसे अस्पताल में दाखिल होना पड़ा। प्रभुपाद ने कहा, भगवान् जगन्नाथ श्यामसुन्दर के पूर्व दुष्कर्मों के परिणामों का निराकरण कर रहे हैं।

• • •

भगवान् चैतन्य के आविर्भाव के दिन, मार्च २६ को प्रभुपाद ने कहा कि सवेरे की बेला में सब भक्त मन्दिर में एक साथ रहेंगे, भगवान् चैतन्य के विषय में पाठ करेंगे और कीर्तन करेंगे और संध्या-समय भगवान् जगन्नाथ की प्राण-प्रतिष्ठा के लिए समारोह होगा। चन्द्रोदय तक व्रत रखने के बाद वे प्रसाद से अपना व्रत समाप्त करेंगे।

जब उस दिन सवेरे श्रील प्रभुपाद मन्दिर में गए, तो उन्होंने भक्तों द्वारा की गई तैयारी देखी। विग्रह के लिए नई वेदी कमरे के पिछले भाग में बनाई गई थी, जिसके ऊपर पहले प्रभुपाद के बैठने की जगह थी, और उनके बैठने का स्थान अब कमरे में दाईं ओर दीवार से सटाकर बना दिया गया था। अपने स्थान से वे भगवान् जगन्नाथ के विग्रह को आसानी से देख सकते थे। वेदी रेडवुड का एक साधारण पटरा था, जो जमीन से सात फुट की ऊँचाई पर दो मोटे लकड़ी के स्तंभों पर टिका था। विग्रह के स्थान के ऊपर एक चंदवा टँगा था। वेदी के नीचे हरिदास-कृत एक चित्र रखा गया था, जिसमें चैतन्य महाप्रभु को अपने साथियों के साथ कीर्तन करते और नाचते हुए दिखाया गया था। चित्र के पृष्ठभाग में मद्रासी कपड़े का परदा था। चित्र के नीचे जमीन से करीब तीन फुट की ऊँचाई पर एक ताक था, जिस पर मोमबत्तियाँ रखी थीं और जिसका इस्तेमाल बाद में भगवान् जगन्नाथ को अर्पित किए जाने वाले उपहारों के लिए किया जाना था।

प्रभुपाद ने अपना आसन ग्रहण किया। नित्य की भाँति उन्होंने कीर्तन कराया, तब भक्तों के साथ जप का एक चक्र पूरा किया। फिर उन्होंने हयग्रीव से *श्रीमद्भागवत* के

प्रथम खंड से भगवान् चैतन्य के जीवन चरित के अंश सस्वर पढ़वाए। किन्तु बहुत से भक्त ऊँघ रहे थे, बावजूद इसके कि हयग्रीव ऊँचे स्वर में शब्दों पर जोर देकर पढ़ रहा था। यद्यपि प्रभुपाद ध्यानपूर्वक सुन रहे थे और चाहते थे कि दूसरे भी उनके साथ बैठकर भगवान् चैतन्य के विषय में सुनें, लेकिन जब उन्होंने देखा कि लोग ऊँघ रहे हैं, तब उन्होंने पाठ बन्द करवा दिया और फिर कीर्तन कराया। उसके पश्चात् वे सबके साथ लगभग १५ मिनट तक जप करते रहे।

"बहुत अच्छा," उन्होंने कहा, "हम फिर पढ़ेंगे। कौन पढ़ेगा?" लीलावती का हाथ झट उठा। "बहुत अच्छा।" उन्होंने लीलावती को अपने पास बैठा लिया और किसी ने उसके सामने माइक्रोफोन रख दिया। लीलावती का पाठ हयग्रीव के गम्भीर लहजे से बहुत भिन्न था। लेकिन उसके स्वर में दूसरे प्रकार की विद्वत्ता झलकती थी। उसके संस्कृत शब्दों और वाक्यांशों के सावधानीपूर्वक किए उच्चारण से श्रील प्रभुपाद बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कई बार टिप्पणी की, "ओह, बहुत बढ़िया।" लीलावती गद्‌गद् हो गई और हर एक को जाग्रत रखने के निश्चय के साथ वह मनोयोगपूर्वक पढ़ती गई।

उस सांध्यबेला में भक्तों और हिप्पी अतिथियों से कमरा खचाखच भर गया। प्रभुपाद उपस्थित थे और सब की चित्तवृत्ति में श्रद्धा और उल्लास था। यह एक विशेष अवसर था। सद्यः निर्मित विग्रह अपने रेडवुड शेल्फ पर अब स्थित थे और उनके ऊपर केसरिया रंग का चंदवा टँगा था; सभी लोग उनको देख रहे थे; उनके अंग-प्रत्यंग तीव्र प्रकाश से आलोकित थे। वे वस्त्र या आभूषणों से सुसज्जित नहीं थे, प्रत्युत चमकीले श्याम, रक्त, श्वेत, हरित, पीले और नीले रंगों से उनका अनुरंजन अभी-अभी किया गया था। वे मुसकरा रहे थे। श्रील प्रभुपाद भी उनकी ऊँची वेदी पर दृष्टि टिकाये हुए उनका अवलोकन कर रहे थे।

प्रभुपाद ने वैदिक साहित्य में वर्णित चार सामाजिक और चार आध्यात्मिक अवस्थाओं पर भाषण किया। उन्होंने बताया कि अपने गुण और कार्य के अनुसार हर व्यक्ति का एक व्यावसायिक धर्म होता है। "किन्तु उस धर्म का अन्तिम लक्ष्य" उन्होंने कहा, "परमेश्वर को सन्तुष्ट करना है।" इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई नीच जाति में या गरीब घर में पैदा हुआ है। "भौतिक योग्यता का आध्यात्मिक विकास से कोई सम्बन्ध नहीं है। आध्यात्मिक विकास का सम्बन्ध आप की प्रतिभा से है, आपकी क्षमता से है, आप के कार्य से है, जिससें आप परमेश्वर को सन्तुष्ट करते हैं।"

प्रभुपाद ने श्रीधर का उदाहरण दिया, जो भगवान् चैतन्य का एक गरीब भक्त था। वह हर दिन पाँच सेंट से कम कमाता था, तिस पर भी वह अपनी कमाई का आधा भाग गंगा की आराधना में लगा देता था। यदि कोई अमीर है, तो उसे भी अपनी सम्पत्ति का आधा

भाग भगवान् की सेवा में अर्पित करना चाहिए। प्रभुपाद ने रूप गोस्वामी का दृष्टान्त दिया, जिन्होंने अपनी सम्पत्ति का पचास प्रतिशत कृष्णभावनामृत के लिए दे दिया, पचीस प्रतिशत अपने परिवार को दिया और शेष पचीस प्रतिशत आपातकाल के लिए रखा। एकाएक प्रभुपाद उस धन के विषय में बोलने लगे, जिसे उनके शिष्यों ने न्यूयार्क में गवाँ दिया था : "और पचीस प्रतिशत अपने लिए ताकि आपातकाल में... क्योंकि ज्योंही धन मेरे हाथ से निकल जाता है, मेरा नियत्रंण नहीं रह जाता। हाल ही में हमने ६०००/- डालर गवाँ दिए हैं,—यहाँ नहीं, न्यूयार्क में; इसलिए ज्योंही चेक हाथ से निकला, त्योंही वह गया, वह गया..."

प्रभुपाद ने इशारे से समझाया कि धन किस तरह चिड़िया की भाँति हाथ से उड़ जाता है। श्रीमान् प्राइस और मूर्ख लड़कों के कष्टप्रद, उलझन-भरे मामले का और कठिन श्रम से प्राप्त धन के चले जाने का सन्दर्भ आ जाने से प्रभुपाद क्षण-भर के लिए रुक गए। फिर वे अपने व्याख्यान में आगे बढ़े।

"भगवान्, परम-ईश्वर पर ध्यान लगाना सहज है" श्रील प्रभुपाद ने कहा। कृष्ण यहाँ हैं। कृष्ण का विग्रह यहाँ है। कृष्ण का रंग यहाँ है। कृष्ण का मुकुट यहाँ हैं। कृष्ण का उपदेश यहाँ है। कृष्ण का आदेश यहाँ है। कृष्ण की वाणी यहाँ है। कृष्ण हर वस्तु में है। हर वस्तु कृष्ण है। कोई कठिनाई नहीं है।

"किन्तु यदि आप अपना ध्यान निराकार और हृदय-स्थित परमात्मा पर ले जाना चाहें, जैसाकि योगी करते हैं, तो वह बहुत कठिन होगा। यह बहुत कठिन है। आप अपना ध्यान निराकार पर केन्द्रित नहीं कर सकते। *भगवद्गीता* में कहा गया है, "*क्लेशोऽधिकतरस्तेषां अव्यक्तासक्त-चेतसाम्*—जो परम तत्त्व के निराकार पहलू से आकृष्ट है—उनका कार्य बहुत कष्टप्रद है। वह मंत्र जपने, नृत्य करने और खाने-पीने की तरह नहीं है—ये सब कार्य तो बहुत बढ़िया हैं। लेकिन वह बहुत कष्टप्रद है। और यदि आप निराकार के चिन्तन में लग भी जायें, तो कई जन्मों के कठिन परिश्रम का परिणाम यही होगा कि आप को अन्ततोगत्वा कृष्ण की शरण में आना पड़ेगा।"

श्रील प्रभुपाद श्री भगवान् के रूप में कृष्ण का चित्रण करते रहे और इसके लिए *भगवद्गीता* और *ब्रह्म-संहिता* जैसे धर्मग्रंथों का प्रमाण देते रहे। उन्होंने बताया कि आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश करने का पहला पग स्वयं कृष्ण के उपदेशों को श्रवण करना है। किन्तु प्रभुपाद ने आगाह किया कि यदि किसी ने कक्षा में ये उपदेश सुने और बाहर जाकर उन्हें भुला दिया, तो वह प्रगति नहीं करेगा। "आप जो कुछ सुनते हैं, उसे औरों को बताना चाहिए," प्रभुपाद ने कहा। और उन्होंने उदाहरण दिया कि किस प्रकार उनके शिष्य अपने आध्यात्मिक गुरु से सुनी बातों को *बैक टु गॉडहेड* में लिख रहे थे और सुनी हुई

बातों को दूसरों को बताने या लिखने के लिए व्यक्ति को विचारशील होना पड़ता है..."

"आप कृष्ण के विषय में सुन रहे हैं और आप को विचार करना है। तब आप दूसरों को बताएँगे, अन्यथा काम नहीं होगा। अत: *श्रोतव्य: कीर्तितव्यश्च ध्येय: पूज्यश्च,* और आपको पूजा करनी चाहिए। अत: पूजा के लिए इस विग्रह की आपको जरूरत है। हमें विचार करना है, बोलना है, सुनना है, पूजा करनी है (*पूज्यश्च*) और क्या यह हमें कभी-कभी ही करना चाहिए? नहीं, *नित्यदा*—नियमित रूप से, नियमित रूप से। यही प्रक्रिया है। इसलिए जो कोई यह प्रक्रिया अपनाता है, वह परम-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त करता है। *श्रीमद्भागवत* की यही स्पष्ट घोषणा है। आपको बहुत धन्यवाद। कोई प्रश्न?"

एक किशोर ने हाथ उठाया और गम्भीरतापूर्वक कहने लगा, "अच्छा, तो आप ने बताया कि हम परम विधान का अनुगमन कैसे करें, हम आत्मा के आदेश का पालन कैसे करें? या जो कुछ आदेश आप, आप का परमात्मा दे? मेरा तात्पर्य... जो कुछ वह कहे? मेरा तात्पर्य, यदि आप पूरा ध्यान लगाएं, तो आप अनुभव करते हैं कि आप ... को कुछ... करना चाहिए..."

प्रभुपाद : 'कुछ' नहीं, वरन् वास्तविक चीज।

किशोर : हाँ, मेरा तात्पर्य है कि उस तरह...

प्रभुपाद : "इसलिए 'कुछ' का प्रश्न नहीं है।"

किशोर : "हाँ, मैं समझता हूँ...।"

प्रभुपाद : " 'कुछ' अस्पष्ट है। तुम्हें बताना है कि वह 'कुछ' क्या है।"

किशोर : "हाँ, तो हम कहें कि..."

प्रभुपाद : उसे तुम व्यक्त नहीं कर सकते। इसका अर्थ यह है कि तुम नहीं जानते। इसलिए हमें सीखना है। यही प्रक्रिया है। मैं उस प्रक्रिया के बारे में बता रहा हूँ। यदि तुम्हें परम सत्य का ज्ञान प्राप्त करना है, तो पहली बात श्रद्धा की है। उसके बाद चिन्तन आता है। तत्पश्चात् तुम्हें भक्त बनना है और प्रामाणिक स्रोतों से सुनना है। यही विभिन्न उपाय है। और जब तुम ब्रह्म-स्तर से परमात्मा-स्तर और तदनन्तर परम ईश्वर के स्तर पर पहुँचकर चरम ज्ञान प्राप्त कर लोगे, तब तुम्हारा कर्तव्य परम ईश्वर को प्रसन्न करना रह जायेगा। तुम्हारे क्रियाशील जीवन की यही पूर्णता है। ये ही प्रक्रियाएँ हैं। निष्कर्ष यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य परम ईश्वर को प्रसन्न करना है, इससे अन्तर नहीं पड़ता कि वह व्यक्ति क्या है।

"और हम उन्हें प्रसन्न कैसे कर सकते हैं? हमें उनके विषय में सुनना है, उनके विषय में बात करनी है, उनके विषय में सोचना है, उनकी पूजा-आराधना करनी है—और यह सब नित्य नियमित रूप से करना है। इससे तुम्हारी सहायता होगी। किन्तु यदि तुम

पूजा नहीं करते, चिन्तन नहीं करते, कुछ श्रवण नहीं करते, कुछ नहीं सुनाते, केवल लगातार 'कुछ,' 'कुछ' के बारे में सोचते रहते हो, तो वह 'कुछ' भगवान् नहीं है।"

किशोर : मेरा तात्पर्य है—अच्छा, आप जानते हैं, मैं युवक हूँ, मैं कुछ कहना चाहता था। मैं नहीं जानता कि मैं क्या..."

प्रभुपाद : "नहीं जानता।" वही मैं बता रहा हूँ। उसे तुम्हें इन तरीकों से जानना है। हम सभी 'नहीं जानने वाले हैं।' इसलिए हमें जानना है। यह तरीका है।

युवती महिला : चूँकि हम परम विधान अभी नहीं जानते, क्योंकि हम अल्पवयस्क हैं और इस क्षेत्र में नए हैं, इसलिए हम इसके बारे में बात कैसे कर सकते हैं?

प्रभुपाद : इसलिए तुम्हें सुनना है। पहली चीज है *श्रोतव्य:* तुम्हें सुनना है। जब तक तुम सुनते नहीं, तुम बात कैसे कर सकते हो? इसलिए हम तुम्हें सुनने की सुविधा प्रदान कर रहे हैं। सुनो और तब बात कर सकोगे। तब चिन्तन कर सकोगे। हम सभी सुविधाएँ दे रहे हैं—सुनने की, बोलने की, सोचने की और पूजा-आराधना करने की। संघ का यही काम है। जब तक सुनोगे नहीं, बोलोगे कैसे? पहला काम है : *श्रोतव्य: ।* तब, *कीर्तितव्यश्च ध्येय: पूज्यश्च नित्यदा।* यही क्रम है। तुम्हें श्रवण करना है और श्रवण करने पर दुहराना है, जप करना है। तदनन्तर तुम्हें चिन्तन करना है, तुम्हें पूजा-आराधना करनी है। यह ही क्रम है।

उपेन्द्र : स्वामीजी तो... हमें श्रवण करना है। मैं समझ गया। पर क्या हमें बोलना है या लम्बे समय तक हमें श्रवण करना है तब बोलना है।

प्रभुपाद : नहीं, लम्बे समय तक क्यों? मान लो कि तुम दो पंक्तियाँ सुनते हो। उन दो पंक्तियों को दुहराओ। और हर चीज के अलावा तुम हरे कृष्ण सुनते हो। इसलिए हरे कृष्ण का जप कर सकते हो। इसमें क्या कठिनाई है, *श्रोतव्य: कीर्तितव्यश्च।* तुम्हें सुनना और जपना है। अत: यदि तुम उन सभी प्रकरणों को याद नहीं रख सकते, जिनके सम्बन्ध में हम *भगवद्गीता* या *श्रीमद्भागवत* से सुनाते हैं, तो कम-से-कम तुम 'हरे कृष्ण' याद रख सकते हो। इसलिए यह सब से आसान तरीका है। हरे कृष्ण सुनो और हरे कृष्ण जपो। अन्य चीजें अपने आप आ जाएँगी।

"अब यह हर एक के लिए सम्भव है। बच्चा भी हरे कृष्ण की आवृत्ति कर सकता है। कठिनाई क्या है? हरे कृष्ण सुनो और हरे कृष्ण जपो। हम तुम्हें कोई कष्टप्रद या कठिन काम नहीं दे रहे हैं। तब हर चीज अपने आप आएगी। हम तुम्हें हर वस्तु दे रहे हैं। लेकिन यदि तुम शुरू में समझते हो कि यह कठिन है, तो तुम केवल यह कर सकते हो—यह बहुत अच्छा है—हरे कृष्ण जपो। तुम वस्तुत: यह कर रहे हो। सुनना और जपना—यह प्रक्रिया तुम्हें सहायता देगी। आध्यात्मिक जीवन में आगे बढ़ने का यह मूलभूत सिद्धान्त

है। बिना सुने हम केवल मनगढ़न्त करेंगे, अपना समय नष्ट करेंगे और लोगों को दिग्भ्रमित करेंगे। हमें प्रामाणिक स्रोतों से सुनना है।"

श्रील प्रभुपाद रुक गए। दार्शनिक वार्ता जो लगभग पौन घंटे तक चलती रही, काफी जटिल थी। वे थके नहीं थे और वार्ता आगे जारी रख सकते थे। किन्तु अब उन्हें श्रीविग्रह की स्थापना करनी थी। आध्यात्मिक जीवन के लिए जरूरी हर वस्तु वहाँ मौजूद थी— मन्दिर, भक्तजन, ग्रंथ, श्रीविग्रह, प्रसाद इत्यादि। वे चाहते थे कि वहाँ एकत्रित युवाजन उसका लाभ उठाएँ। वे पशुओं की तरह क्यों रहें और अस्पष्ट 'कुछ' को टटोलते हुए आध्यात्मिक जीवन के बारे में क्यों सोचते रहें ? उन्हें कृष्ण-कृपा का लाभ उठाना चाहिए और जीवन को सफल और आनन्ददायक बनाना चाहिए। और इस निमित्त प्रभुपाद उनके अथक सेवक थे।

प्रभुपाद : "तो, हयग्रीव ? यहाँ आओ।" प्रभुपाद ने एक थाली में भक्तों से एक बड़ी बत्ती सजवाई। जिस समारोह की योजना उन्होंने बनाई थी, वह बहुत सादा था—भक्तों और अतिथियों को एक के बाद एक आकर भगवान् जगन्नाथ आदि के श्रीविग्रहों के सामने वृत्ताकार आरती करनी थी। "बत्ती को जलाना चाहिए" श्रील प्रभुपाद ने कहा, "और जब कीर्तन हो रहा हो, तो किसी को श्रीविग्रह के सामने इस तरह करना चाहिए।" (श्रील प्रभुपाद ने श्रीविग्रह के सामने अपने हाथ वृत्त की गोलाई में घुमाये) "देख रहे हो ?"

हयग्रीव : "हाँ, हाँ।"

प्रभुपाद : "हाँ, कीर्तन के साथ। और जब एक व्यक्ति थक जाये, तो उसे दूसरे व्यक्ति को दे देना चाहिए। जब वह थक जाये तो उसे अन्य को दे देना चाहिए—जब तक कीर्तन चले, ऐसा ही करना है। कीर्तन के साथ इसे अभी करना है। समझ रहे हो ? हाँ, तुम शुरू करो और जब तुम थक जाओ, तो दूसरे को दे दो। इस तरह इसे चलाते रहना है।"

श्रील प्रभुपाद ने अपने आसन से हयग्रीव को हाथ में जलती बत्ती लिए श्रीविग्रह के निकट पहुँचने की विधि बताई। कुछ लड़कियाँ अधीर प्रत्याशा में हीं-हीं करने लगीं। "श्रीविग्रह के सामने," श्रील प्रभुपाद ने कहा, "ठीक है। अच्छा हो अब कीर्तन शुरू किया जाये।"

प्रभुपाद करताल बजाने और उस लोकप्रिय धुन के साथ हरे कृष्ण मंत्र गाने लगे, जिसका परिचय उन्होंने अमेरिका में कराया था। "ठीक सामने" वे पुकार उठे, हयग्रीव को श्रीविग्रह के ठीक सामने खड़े होने के लिए संकेत करते हुए। भक्तगण और अतिथि अपने पैरों पर खड़े होकर नृत्य करने लगे। उनकी बाहें ऊपर को उठी हुई थीं और वे लय के साथ आगे-पीछे झूम रहे थे और श्रीविग्रहों की चमकती हुई मूर्तियों को देखते हुए कीर्तन कर रहे थे। चंदवा के नीचे हरा, लाल और पीला प्रकाश बारी-बारी से कौंध रहा था,

जिससे भगवान् जगन्नाथ, सुभद्रा और बलराम के असाधारण नेत्र प्रदीप्त हो उठते थे। मुकुंद, जिसने प्रकाश की व्यवस्था की थी, मुसकराया और उसने स्वामीजी की स्वीकृति की आशा में उनकी ओर देखा। प्रभुपाद ने सिर हिलाया और वे उत्साहपूर्वक हरे कृष्ण गाने में लगे रहे।

युवा हिप्पी गान और नृत्य में उत्साह दिखा रहे थे। वे जानते थे कि कीर्तन आमतौर पर एक घंटा चलता है। कुछ की समझ में स्वामीजी की बात आ गई थी, जब उन्होंने मन को परम ईश्वर के साकार रूप पर केन्द्रित करने को कहा था। उनकी समझ में वह बात भी आ गई थी, जब उन्होंने श्रीविग्रहों की ओर देख कर कहा था, "कृष्ण यहाँ हैं।" दूसरों की समझ में बात नहीं आई थी; वे यही समझते थे कि हरे कृष्ण गाना और फूलों और धूप के धूम्र से आच्छादित मुसकराते, विशाल-नेत्र श्रीविग्रहों को देखना ही महान् और आनन्दप्रद कार्य है।

जब एक के बाद एक भक्त भगवान् की आरती कर रहा था, तो प्रभुपाद प्रसन्नतापूर्वक इसे देख रहे थे। श्रीविग्रह की स्थापना की यह एक साधारण-सी विधि थी। यद्यपि भारत में बड़े मन्दिरों में मूर्ति-स्थापना की विधि जटिल और सुनिश्चित थी, जिसमें बड़ी दक्षिणा लेने वाले पुरोहितों के निर्देशन में कई दिनों तक लगातार धार्मिक अनुष्ठान चलते रहते थे, लेकिन सैन फांसिस्को में दक्षिणा लेने वाले ब्राह्मण पुरोहितों का अभाव था और अन्य बहुत-से नियमों का निभाना असम्भव था।

भारत के वर्ण-व्यवस्था-समर्थक ब्राह्मणों की निगाह में किसी अहिन्दू का भगवान् जगन्नाथ को स्पर्श करना और उनकी पूजा-अर्चा करना अपधर्म था। प्रभुपाद के अतिरिक्त वहाँ उपस्थित व्यक्तियों में से किसी को जगन्नाथ पुरी के मन्दिर में प्रवेश भी न करने दिया जाता। किसी पाश्चात्य गोरे पुरुष को भगवान् जगन्नाथ का दर्शन भी नहीं करने दिया जाता था, अतिरिक्त प्रतिवर्ष उस एक दिन के, जब रथयात्रा-उत्सव में वे अपने रथ पर निकलते थे। किन्तु ये निषेध सामाजिक प्रथाएँ थीं, शास्त्रीय आदेश नहीं। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने श्रीविग्रह की पूजा और दीक्षा-संस्कार, बिना वर्ण, जाति या राष्ट्रीयता के भेदभाव के सबके लिए खोल दिये थे। और श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती के पिता भक्तिविनोद ठाकुर उस दिन की कामना करते थे, जब पाश्चात्य जगत के लोग अपने भारतीय बंधुओं के साथ मिलें-जुलेंगे और हरे कृष्ण गाएँगे।

श्रील प्रभुपाद पश्चिम में इसलिए आए थे कि वे पाश्चात्य लोगों को वैष्णव बना करके अपने गुरु महाराज और भक्तिविनोद ठाकुर की इच्छाओं और स्वप्न को पूरा करें। तो यदि पश्चिम के लोग सचमुच भक्त बनते हैं, तो उन्हें श्रीमूर्ति की पूजा का अधिकार देना होगा। अन्यथा उनका शुद्धीकरण और भी कठिन हो जायेगा। श्रील प्रभुपाद को अपने गुरु

महाराज के निर्देशों और धर्मशास्त्रों में विश्वास था। उनका विश्वास था कि भगवान् जगन्नाथ पतितों के प्रति विशेष कृपालु हैं। उन्होंने प्रार्थना की कि विश्व के स्वामी, नई जगन्नाथ पुरी में अपने स्वागत से अप्रसन्न न हों।

जब कीर्तन समाप्त हो गया, तब प्रभुपाद ने हरिदास से आरती अपने पास मँगाई। उन्होंने आरती पर अपने हाथ फेरे और उनसे अपने मस्तक का स्पर्श किया। "हाँ," वे बोले, "हर एक को आरती दिखाओ, हर एक को। जो जितना घन चढ़ा सके, चढ़ाए। आरती इस तरह लो और हर एक को दिखाओ। उन्होंने संकेत किया कि हरिदास कमरे में उपस्थित हर व्यक्ति को आरती दिखाए, जिससे हर एक आरती की लौ पर हाथ फेरे और फिर हाथों से अपना माथा स्पर्श करे। जब हरिदास एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के पास जाने लगा, तो कुछ भक्तों ने थाल में कुछ सिक्के डाले और अन्यों ने उनका अनुसरण किया।

श्रील प्रभुपाद ने आगे समझाया : "भागवत् में श्रवण, कीर्तन, चिन्तन और पूजन के बारे में कहा गया है; जगन्नाथ स्वामी के आगमन पर यह क्रम जो हमने अभी शुरू किया है, बताता है कि यह मन्दिर अब पूर्णतः स्थापित हो गया है। अस्तु, आराधना की यही विधि है। इसे आरती कहते हैं। इसलिए कीर्तन के अन्त में आरती की जाया करेगी। आराधना की यह प्रक्रिया आरती के प्रकाश की गर्मी लेना है और आपकी अवस्था जैसी भी हो, आराधना के निमित्त कुछ धन देना है। यदि आप इस सीधे-सादे नियम का पालन करते हैं, तो आप देखेंगे कि परम सत्य की अनुभूति आप किस प्रकार से करते हैं।

"मैं आप से एक दूसरी प्रार्थना करता हूँ : आप सब भक्तजन जब मन्दिर आएँ, तो अपने साथ एक फल और एक फूल लाएँ। यदि आप अधिक फल, अधिक फूल ला सकें तो बहुत अच्छा होगा। यदि ऐसा न हो सके तो एक फल, एक फूल लाना महँगा नहीं पड़ेगा। और उसे श्रीविग्रह को चढ़ाएँ। इसलिए मैं आप से प्रार्थना करता हूँ कि जब आप मन्दिर आएँ, तब इसे लाएँ-जो भी फल मिले। इसका मतलब यह नहीं है कि आपको बहुत महँगा फल लाना है। कोई भी फल हो; जो भी आप ला सकें। एक फल और एक फूल।

प्रभुपाद रुक गए, कमरे की चारों ओर देखते हुए : "हाँ, अब आप प्रसाद बाँट सकते हैं।"

अतिथि फर्श पर पंक्तियों में बैठ गए। और भक्त प्रसाद का वितरण करने लगे। उन्होंने पहली प्लेट प्रभुपाद को दी। खाद्य पदार्थ वे ही थे, जिन्हें तैयार करना प्रभुपाद ने अपनी पाकशाला में शिष्यों को सिखाया था : समोसा, हलवा, पूड़ियाँ, भात, कई पकाई गई सब्जियाँ, फल, चटनी, मिठाइयाँ—रविवार के सभी विशेष व्यंजन। भक्तों को प्रसाद बहुत पसन्द आया और जो कुछ उन्हें मिल सका, वे सब खा गए। भक्तजनों, विशेषकर विशेषज्ञ

महिलाओं द्वारा अधिकाधिक प्रसाद परोसा गया और अतिथि आराम से खाते रहे और भोज की संध्या और प्रफुल्ल वार्तालाप का आनन्द लेते रहे। सभी व्यंजनों का स्वाद लेने के बाद प्रभुपाद ने दृष्टि ऊपर की और कहा, "बहुत अच्छे व्यंजन हैं। बनाने वालों की जय हो।"

कुछ मिनट बाद जब भोजनोत्सव चल रहा था, श्रील प्रभुपाद ने माइक्रोफोन द्वारा कहा, *जगन्नाथः स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे* होवर्ड, इसे दुहराओ।"

हयग्रीव ने मुख का कौर निगलकर अपना गला साफ किया और बोला, *जगन्नाथः स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।"*

प्रभुपाद : "हाँ, इसका जप होना चाहिए। *जगन्नाथः स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।"*

एक लड़के ने पूछा कि इसका तात्पर्य क्या है। हयग्रीव ने उत्तर दिया, "ओह... उह, जगत के स्वामी, कृपा करके मेरे सामने प्रकट हों।"

जब प्रभुपाद ने एक वयोवृद्ध, भद्र वेशभूषा वाले व्यक्ति को भोजन की प्लेट पाये बिना कमरे से बाहर जाते देखा, तो वे व्यग्र हो उठे, "ओह, वे क्यों चले जा रहे हैं? उन्हें बुलाओ।"

एक लड़का मन्दिर का दरवाजा खोलकर उस व्यक्ति के पीछे दौड़ा और बोला, "कृपा करके जाइए मत। स्वामीजी की प्रार्थना है।"

जब वह व्यक्ति स्टोरफ्रंट में पुनः प्रविष्ट हुआ तो प्रभुपाद ने प्रार्थना की, "कृपा करके प्रसाद ग्रहण करें।" और परोसने वालों को आदेश दिया "पहले इन्हें दीजिए" और इस प्रकार भोजनोत्सव चलता रहा, भगवान् जगन्नाथ की वेदिका के नीचे और उनके सेवक श्रील प्रभुपाद के तत्त्वावधान में।

• • •

दूसरे दिन सनक में आकर भक्तजन जगन्नाथ के श्रीविग्रह को उनकी वेदिका से उठाकर कीर्तन के लिए गोल्डेन गेट पार्क में ले गए। कुछ मिनटों के अन्दर, हिप्पी हिल के नीचे घास के मैदान में सैकड़ों लोग जमा हो गए। वे भगवान् जगन्नाथ के इर्द-गिर्द नाचने-गाने लगे। कई घंटों के बाद भक्तों ने उन्हें वापस लाकर पुनः वेदिका पर आसीन कर दिया।

प्रभुपाद ने इसे नापसन्द किया : "श्रीविग्रह को मन्दिर कभी भी नहीं छोड़ना चाहिए। श्रीविग्रहों का काम लोगों से मिलने जाना नहीं है, सिवाये विशेष अवसरों के। वे पार्क के लिए नहीं हैं जहाँ पक्षी उन पर बीट गिराएँ। यदि कोई श्रीविग्रहों का दर्शन चाहता है, तो उसे उनके पास जाना होगा।"

• • •

भगवान् जगन्नाथ की उपस्थिति से मन्दिर शीघ्र सुन्दर बन गया। भक्तजन उनके लिए प्रतिदिन माला बनाते थे। जदुरानी–कृत भगवान् विष्णु का चित्र न्यूयार्क से पहुँच गया और गोविन्ददासी ने श्रील प्रभुपाद के एक विशाल चित्र का निर्माण किया, जिसे उनके आसन की बगल में लटकाया गया था। भक्तों ने कृष्ण की भारतीय अनुकृतियाँ भी दीवालों पर लगा दीं। भगवान् जगन्नाथ पर पड़ते प्रकाश में उनके नेत्र स्पन्दमान लगते थे और उनके रंगों में गतिशीलता का आभास होता था। वे हैट ऐशबरी के मनोविकासनीय पड़ोस में विशेष आकर्षण–बिन्दु बन गए।

जैसी कि प्रभुपाद ने प्रार्थना की थी, भक्त और अतिथि भगवान् जगन्नाथ की वेदिका पर चढ़ाने के लिए उपहार लाने लगे। हिप्पी वहाँ जाते और जो कुछ लाते, वहाँ छोड़ जाते : गेहूँ की एक बाल, आधी रोटी, नमकीन बिस्कुटों का बक्स, जलाने की लकड़ी का टुकड़ा, मोमबत्तियाँ, फूल या फल। यह सुनकर कि किसी वस्तु को अपने प्रयोग में लाने के पहले उसे भगवान् को अर्पित करना चाहिए, कुछ हिप्पी अपने नए कपड़े पहनने के पहले वहाँ ले जाते और प्रार्थना के साथ भगवान् जगन्नाथ को अर्पित कर देते। ये हिप्पी भगवान् जगन्नाथ के आदेशों का पालन नहीं करते थे, पर उनका आशीर्वाद चाहते थे।

हर रात को भक्तजन प्रभुपाद के बताने के अनुसार मन्दिर में आरती करते थे। वे बारी–बारी से भगवान् की आरती उतारते थे। जब भक्तों ने पूछा कि क्या वे आरती के साथ कुछ और भी कर सकते थे, तो प्रभुपाद ने कहा कि हाँ, वे धूप चढ़ा सकते थे। उन्होंने बताया कि श्रीविग्रह की पूजा की और भी कई बातें थीं; उनकी संख्या इतनी थी कि वे भक्तों को चौबीस घंटे व्यस्त रख सकती थी, पर यदि स्वामीजी उन सब को एक साथ बता दें, तो भक्त घबराकर बेहोश हो जाएँगे।

• • •

एक शिष्य से अपने कमरे में निजी वार्तालाप करते हुए प्रभुपाद ने बताया कि मन्दिर में कीर्तन के बीच वे भगवान् जगन्नाथ के समक्ष नृत्य करते भगवान् चैतन्य के चित्र की कल्पना करते हैं। उन्होंने बताया कि किस प्रकार भगवान् चैतन्य ने पुरी की यात्रा की और भगवान् जगन्नाथ के सामने नृत्य करने में वे इतना भावविभोर हो गए कि उनके मुख से 'जग–जग' के अतिरिक्त और कुछ नहीं निकलता था। भगवान् चैतन्य सोच रहे थे, "कृष्ण, मैं कब से आपको देखना चाहता था। और अब मैं आपको देख रहा हूँ।" जब भगवान् चैतन्य पुरी में रह रहे थे, तो उनसे मिलने पाँच–पाँच सौ व्यक्ति एक साथ आते

और हर संध्या को चार दलों के साथ विशाल कीर्तन होता; हर दल में चार मृदंग और आठ करताल बजाने वाले भक्त होते। प्रभुपाद ने समझाया कि, "एक दल इस ओर होता, एक दल उस ओर; एक दल सामने होता और एक दल पीछे। और चैतन्य महाप्रभु बीच में होते। वे सब नृत्य करते और चारों दल मंत्र जपते, "हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे..." जब तक वे जगन्नाथ पुरी में रहे, यह कार्यक्रम हर संध्या को होता।"

भक्तों की समझ में आ गया कि उनके और स्वामीजी के बीच एक महान् अन्तर था। स्वामीजी कभी हिप्पी नहीं रहे थे। हैट ऐशबरी के एल.एस.डी. के मायाजाल, मनोतरंग वाले इश्तिहारों, राक-संगीतकारों, हिप्पियों के अनाप-शनाप और सड़कों में भटकते आवारा लोगों के बीच उन्हें कभी अच्छा नहीं लगा था। वे जानते थे कि प्रभुपाद भिन्न प्रकार के थे, यद्यपि कभी-कभी वे यह भूल भी जाते थे। प्रभुपाद हर दिन उनके साथ, न जाने कितना समय बिताते थे—उनके साथ खाते-पीते थे, हास-परिहास करते थे और उन पर निर्भर रहते थे। किन्तु कभी-कभी उनके विशेष व्यक्तित्व की अनुभूति उन भक्तों को तब होती, जब वे भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर में उनके साथ कीर्तन करते होते और औरों से अलग, वे पुरी में जगन्नाथ के सामने किए गए भगवान् चैतन्य के कीर्तन के विचारों में डूबे होते थे। जब भगवान् चैतन्य को जगन्नाथ के दर्शन हुए थे, तो उन्हें कृष्ण मिल गए थे और कृष्ण के प्रति उनका प्रेम इतना प्रगाढ़ था कि वे पागल हो गए थे। प्रभुपाद इन विचारों में इतना अधिक डूब जाते थे कि वह उनके शिष्यों की समझ के बाहर था—और फिर भी वे उनके प्रिय मित्र और आध्यात्मिक गुरु के रूप में उनके साथ होते थे। वे उनके सेवक थे, अपनी तरह उन्हें प्रार्थना करना सिखाते थे, जिससे वे कृष्ण की सेवा कर सकें, "हे जगत के स्वामी, मुझे दर्शन दें।"

• • •

गोविन्ददासी स्वामीजी से एक प्रश्न पूछना चाहती थी। उन्होंने संक्षेप में बताया था कि कृष्ण के वियोग में भगवान् चैतन्य रुदन किया करते थे और एक बार वे विलाप करते हुए नदी में कूद पड़े थे कि, "कृष्ण कहाँ हैं ?" गोविन्ददासी के मन में द्विविधा थी कि उसका प्रश्न उचित होगा या नहीं, लेकिन वह अवसर की ताक में थी।

एक संध्या को जब प्रभुपाद अपना व्याख्यान समाप्त कर चुके और उन्होंने प्रश्न पूछने को कहा और कोई प्रश्नकर्ता आगे नहीं आया, तो गोविन्ददासी ने सोचा, "मेरे लिए यही अवसर है।" किन्तु वह हिचक रही थी। उसका प्रश्न व्याख्यान के विषय से सम्बन्धित नहीं था और इसके अतिरिक्त वह सार्वजनिक रूप से प्रश्न पूछना नहीं चाहती थी।

"कोई प्रश्न नहीं है ?" प्रभुपाद ने अपनी चारों ओर देखा। गोविन्ददासी ने सोचा कि

प्रभुपाद को निराशा हो रही है कि कोई प्रश्न पूछने वाला नहीं है। उन्होंने कई बार कहा था कि श्रोताओं को प्रश्न पूछने चाहिएं और अपने सन्देहों का निराकरण करवा लेना चाहिए। उन्होंने फिर पूछा, "क्या आपके पास कोई प्रश्न है ?"

गोविन्ददासी : "उह अच्छा, क्या आप भगवान् चैतन्य के इस प्रश्न के बारे में बता सकते हैं कि..."

प्रभुपाद : "हुम..."

गोविन्द दासी : "कृष्ण कहाँ हैं ?"

प्रभुपाद : "हुम..."

गोविन्द दासी : "क्या आप भगवान् चैतन्य के नदी में कूदने और इस प्रश्न के बारे में बता सकते हैं कि कृष्ण कहाँ है ? या यह प्रश्न उचित..."

प्रभुपाद : "हाँ, हाँ, बहुत अच्छा। तुम्हारा प्रश्न बहुत अच्छा है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ।"

"भगवान् चैतन्य कृष्ण-भक्ति के सब से महान् प्रतीक थे, वे कृष्ण-भक्त थे। उनके जीवन-चरित से देख सकती हो। उन्होंने कभी नहीं कहा कि, "मैंने कृष्ण को देखा है।" वे कृष्ण के लिए पागल थे। चैतन्य-दर्शन की यही प्रक्रिया है। इसे विरह कहते हैं। विरह का अर्थ—अलगाव है : कृष्ण, आप इतने अच्छे हो, आप इतने कृपालु हो, किन्तु मैं इतना दुर्जन हूँ, मैं इतना पापी हूँ कि मैं आपका दर्शन नहीं पा सकता। आपके दर्शन की मुझमें योग्यता नहीं है।" अतएव इस प्रकार यदि कोई कृष्ण के वियोग का अनुभव करता है कि, "कृष्ण, मैं आपको देखना चाहता हूँ, किन्तु मैं इतना अयोग्य हूँ कि मैं आपका दर्शन नहीं कर सकता, तो वियोग की ये भावनाएँ उसकी कृष्ण-चेतना में संवृद्धि करेंगी—वियोग की भावनाएँ। यह नहीं कि 'कृष्ण, मैंने आपका दर्शन पा लिया है। बस, ठीक है; सब समाप्त हो गया। मैं कृष्ण को समझ गया हूँ—नहीं, निरन्तर यही सोचो कि, "मैं कृष्ण के दर्शन के अयोग्य हूँ।" इससे तुम्हारी कृष्ण-चेतना में संवृद्धि होगी।

"चैतन्य महाप्रभु ने वियोग की इन भावनाओं का प्रदर्शन किया था, यह राधारानी का वियोग है। जब कृष्ण वृन्दावन से अपने पिता के नगर में चले गए, तो राधारानी को ऐसी अनुभूति हुई थी और उसमें वे कृष्ण के लिए पागल हो गई थीं। कृष्ण चैतन्य, चैतन्य महाप्रभु ने राधारानी से, कृष्ण से वियोग की भावना प्राप्त की। कृष्ण-चेतनामय होना ही कृष्ण की आराधना का सर्वोत्तम उपाय है। इस तरह तुम देखती हो कि भगवान् चैतन्य सागर में कूद पड़े थे : 'कृष्ण, यदि तुम यहाँ हो, कृष्ण, यदि तुम यहाँ हो।'

"इसी भाँति रूप गोस्वामी, सनातन गोस्वामी आदि गोस्वामी भी, जो भगवान् चैतन्य के साक्षात् शिष्य हैं और एक ही गुरु-परम्परा में आते हैं, कृष्ण की आराधना वियोग-भावना से करते हैं। उनके सम्बन्ध में एक बहुत अच्छा श्लोक है।"

श्रील प्रभुपाद ने उसे गाकर सुनाया :

हे राधे व्रज-देविके च ललिते हे नन्द-सूनो कुतः
श्री गोवर्धन-कल्प-पादप-तले कालिन्दी-वन्ये कुतः।
घोषान्तव इति सर्वतो व्रज-पुरे खेदैर महा-विह्वलौ
वन्दे रूप-सनातनौ रघु-युगौ श्री-जीव गोपालकौ॥

("मैं वंदना करता हूँ छह गोस्वामियों की, जिनके नाम हैं श्री रूप गोस्वामी, श्री सनातन गोस्वामी, श्री रघुनाथ भट्ट गोस्वामी, श्री रघुनाथ दास गोस्वामी, श्री जीव गोस्वामी एवं श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी और जो वृन्दावन में हर स्थान पर बड़े जोर से यह चिल्लाकर कीर्तन करते थे कि, "हे वृन्दावन की महारानी, राधारानी! हे ललिता, ओ नंद महाराज के पुत्र, आप सब अब कहाँ हो? क्या तुम गोवर्धन पर्वत पर हो या यमुना के किनारे वृक्षों के नीचे हो? तुम सब कहाँ हो?" कृष्ण-चेतना में निमग्न उनकी भावनाएँ इस तरह अभिव्यक्त होती थीं।)

"ये गोस्वामी भी जब वे अपनी भक्ति में परिपक्व हो गए, तो वे क्या करते थे? वे प्रतिदिन वृन्दावन धाम पहुँच जाते थे, पागल व्यक्ति की तरह : 'कृष्ण, आप कहाँ हो,' यही गुण है।

"यह बहुत अच्छा प्रश्न है।"

श्रील प्रभुपाद रुके और उनके मुख से एक विचारपूर्ण "ममम" निकला। वे मौन रहे। भक्त भी मौन रहकर उन्हें देखते रहे। वे रेडवुड मंच के ऊपर काली मखमल की गद्दी पर पालथी मारकर बैठे थे। उनके हाथ जुड़े थे, नेत्र बन्द थे। और वे आन्तरिक उल्लास की भावनाओं से अभिभूत हो उठे। यद्यपि सीधे-सादे उपस्थित भक्तों को पता नहीं चला कि क्या हो रहा है, फिर भी वे देख सकते थे कि स्वामीजी गहरे अन्तर्जगत् में प्रविष्ट हो रहे थे। उन्हें अनुभव हो रहा था कि वातावरण विस्मयकारी भक्ति की निःशब्दता में बदल रहा। वे अपनी दृष्टि प्रभुपाद पर जमाए हुए थे।

डेढ़ मिनट बीत गया। प्रभुपाद के मुख से दूसरा विचारपूर्ण 'ममम' निकला और उन्होंने नेत्र खोल दिए। वे आँसुओं से भरे थे। हाथ बढ़ाकर उन्होंने करताल ले लिए, जिनसे उनके हाथों में खड़खड़ाहट की आवाज हुई। लेकिन वे आगे नहीं बढ़े। बाह्य चेतना को समेटकर वे फिर अन्तर्मुखी हो गए।

मौन का एक और क्षण निकल गया। वह क्षण अत्यन्त शान्त, फिर भी गहरा और

लम्बा लगा। एक क्षण और बीत गया। लगभग चार मिनट बीतने पर प्रभुपाद ने अपना गला साफ किया और करतालों को एक-दूसरे से खनकाया, एक धीमी लय आरम्भ करते हुए। एक भक्त ने हारमोनियम से एक सुर निकाला। प्रभुपाद ने गाया : *गोविन्द जय जय, गोपाल जय जय/ राधा रमण हरि गोविन्द जय जय।* कीर्तन की गति में क्रमशः तेजी आती गई। लगभग दस मिनट के पश्चात् कीर्तन बन्द हो गया और प्रभुपाद कमरे से चले गए।

भक्तजन उठकर अपने-अपने कामों में लग गए। कुछ प्रभुपाद के पीछे चलकर सामने के द्वार से रसोई-घर में पहुँच गए, कुछ एकत्र होकर आपस में वार्तालाप करने लगे। वे सब जानते थे कि उनके गुरु महाराज कृष्ण के वियोग का तीव्रता से अनुभव कर रहे थे। उनके मन में तनिक भी सन्देह नहीं था कि यह अनुभूति गहरी भावविभोरता की थी, क्योंकि प्रभुपाद की मौजूदगी में उस लम्बी विशिष्ट निःशब्दता में उन्हें भी कृष्ण के प्रति वैसे ही प्रेम की झलक की अनुभूति हुई थी।

• • •

अपने शिष्यों के आमंत्रण पर श्रील प्रभुपाद ने सागर-तट पर एक कीर्तन करना स्वीकार कर लिया। एक मंगलवार की रात्रि में जब मन्दिर में कीर्तन या व्याख्यान का कोई कार्यक्रम नहीं था, वे शिष्यों में से एक की कार में पीछे की सीट पर बैठ गए। लगभग एक दर्जन दीक्षित अनुयायी और दो कुत्ते दूसरी कारों में सवार हो गए और वे एक साथ सागर-तट की यात्रा पर निकले। जब वे तट पर पहुँच गए, तो कुछ अनुयायी तट पर भागकर जल में बहकर आ रही लकड़ियाँ बटोर लाए। फिर उन्होंने एक बालू के टिब्बे की आड़ में आग जलाई।

तीसरे पहर की ठंडी समुद्री हवा बह रही थी। प्रभुपाद चार खाने वाली कमीज के ऊपर एक लम्बा चार खाने वाला कोट पहने हुए थे। कीर्तन के बीच वे तालियाँ बजा रहे थे और नृत्य कर रहे थे। उनके भक्त चारों ओर गोलाई में खड़े उनका साथ दे रहे थे। क्योंकि सूर्य अस्त होने को था, सभी भक्त सागर की ओर मुख करके खड़े हो गए। उन्होंने अपनी बाहें ऊपर उठाईं और वे ऊँची आवाज में गाने लगे—"हरिऽबोल!" किन्तु तट पर उत्ताल तरंगों के धमाकों और विस्तृत क्षेत्र में चारों ओर तेज बहती हवा की सनसनाहट के बीच उनके कीर्तन की आवाज डूब गई।

आग की चारों ओर इकट्ठे होकर भक्तों ने धातुपर्णिका *एलुमिनियम फोयल* में लपेटे आलू और सेब जिनमें किशमिश और गुड़ भरा था, कोयलों के नीचे दबा दिए। यह उनके मन की उपज थी, किन्तु प्रभुपाद को कैलीफोर्निया में इस तरह कीर्तन करके आनन्द लेने के उनके विचार से प्रसन्नता थी।

हरिदास और हयग्रीव ने नारद मुनि पर एक गाना बनाया और उन्होंने उसे गाकर प्रभुपाद को सुनाया।

क्या आप जानते हैं कि इस विश्व का पहला शाश्वत अन्तरिक्ष यात्री कौन है?
पहला पुरुष जिसने अपनी प्रचंड तरंगों को
ब्रह्माण्ड के सुदूर लोकों को प्रेषित किया?
क्योंकि जिस गीत का वह उच्च स्वर से गान करता है
उससे ग्रहों में उछाल पैदा हो जाता है
किन्तु इसके पहले कि आप मुझे मूर्ख समझें, मैं आपको बताता हूँ
कि मैं नारद मुनि के विषय में बात कर रहा हूँ,
जो गाते हैं
हरे कृष्ण, हरे कृष्ण,
कृष्ण कृष्ण, हरे हरे,
हरे राम, हरे राम
राम राम, हरे हरे

प्रभुपाद हँस पड़े। जिस में कीर्तन हो, वह हर चीज उन्हें पसन्द थी। और उन्होंने उनसे कहा कि अपने देशवासियों के लिए वे इस तरह के और गीत लिखें।

तट पर इकट्ठे घूमते हुए वे एक टूटी-फूटी डच पनचक्की के पास पहुँचे। "मुकुन्द," प्रभुपाद बोले, "तुम सरकार के पास जाओ और कहो कि यदि वे हमें यहाँ एक मन्दिर बनाने दें, तो हम इस पनचक्की का जीर्णोद्धार कर देंगे।" मुकुंद ने पहले इसे मजाक समझा, लेकिन उसने देखा कि प्रभुपाद इस विषय को गम्भीरता से ले रहे थे। मुकुंद ने कहा कि वह इसके बारे में मालूम करेगा।

अपने ढीले चार खाने वाले कोट में, जिसके बटन गले तक बन्द थे, प्रभुपाद भक्तों के इस परिभ्रमण के प्रिय केन्द्र थे। घूमने के बाद वे एक लकड़ी के लट्ठे पर बैठ गए और भुने हुए आलू, जिन पर पिघला मक्खन लगा था, खाने लगे। जब वे खा चुके तो अवशिष्ट भाग को उन्होंने कुत्तों के आगे फेंक दिया।

जब रात का अँधेरा बढ़ चला, सागर के ऊपर आकाश में तारे निकल आए और सभी भक्त प्रभुपाद की चारों ओर आखिरी कीर्तन के लिए खड़े हो गए। तब ठीक मन्दिर की भाँति वे नत-मस्तक हुए और प्रभुपाद ने भगवान् चैतन्य और उनकी गुरु-शिष्य परम्परा के प्रति प्रार्थना-गीत का नेतृत्व किया। परन्तु अन्त में उन्होंने कहा, "प्रशान्त महासागर की

जय हो! सभी एकत्रित भक्तों की जय हो! सभी एकत्रित भक्तों की जय हो!"

वे सभी हँसने लगे। स्वामीजी वही कर रहे थे, जो उनके भक्त चाहते थे : वे उनके साथ सागर तट पर सांध्य-कीर्तन और खाने-पकाने का आनन्द ले रहे थे। और शिष्य वही कर रहे थे, जो स्वामीजी चाहते थे : वे महामंत्र का जप कर रहे थे, कृष्ण के भक्त बन रहे थे और आनन्द प्राप्त कर रहे थे।

• • •

हयग्रीव प्रभुपाद के कमरे में उनके सामने अकेला बैठा था। कुछ दिन पहले हयग्रीव ने प्रभुपाद को भगवान् चैतन्य के विषय में एक नाटक दिखाया था, जिसे उसने पुस्तकालय में पाया था और प्रभुपाद ने कहा था कि वह सच्चा नहीं था। इसलिए प्रभुपाद ने एक सच्चे नाटक के लिए रूपरेखा तैयार करने का और उसे हयग्रीव से लिखाने का निश्चय किया "मैं तुम्हें सम्पूर्ण कथावस्तु दूँगा," श्रील प्रभुपाद ने कहा, "तब तुम्हें केवल उसे लिखना है।"

प्रभुपाद आराम से प्रसन्न-चित्त बैठे थे और भगवान् चैतन्य के जीवन की घटनाएँ सुनाने को उत्सुक थे। उन्होंने तेईस दृश्यों की रूपरेखा तैयार कर ली थी और अब वे हर एक की व्याख्या करना चाहते थे। हयग्रीव के लिए केवल इतना ही समय था कि वह यह समझ सके कि प्रभुपाद क्या करने जा रहे थे और नोट लेने के लिए तैयार होने को तो समय नहीं के बराबर था, जब प्रभुपाद ने पहले दृश्य का वर्णन आरम्भ किया।

"पहला दृश्य यह है," उन्होंने कहा, "कि लोग संकीर्तन करते हुए सड़क पर जा रहे हैं, जैसाकि हम करते हैं। जुलूस बहुत अच्छा है; लोग मृदंग, करताल और बिगुल बजा रहे हैं और सभी लोग सामान्य ढंग से संकीर्तन कर रहे हैं। हमें एक अच्छे जुलूस का आयोजन करना होगा।

"दूसरा दृश्य कलि को काले रंग से रंजित दिखाता है। वह राजसी वेशभूषा में है। उसका रूप भयावह है। और उसकी महारानी भी भयानक-मुख वाली महिला है। इसलिए वे क्षुब्ध हैं। वे आपस में बातें करेंगे कि, "अब संकीर्तन-आन्दोलन आ गया है, इसलिए हम कलियुग में अपना व्यवसाय कैसे करेंगे?" इस दृश्य में एक कोने में दो या तीन व्यक्ति मदिरा-पान करते होंगे। दृश्य इस प्रकार का होगा। कलियुग का प्रतीक कलि और उसकी रानी बीच में बैठे होंगे। एक कोने में कोई मदिरा पी रहा है और दूसरे कोने में एक अन्य व्यक्ति एक स्त्री के साथ अवैध प्रेम और कामुकता की बातें कर रहा है। एक दूसरे भाग में कोई व्यक्ति गाय का वध कर रहा है, अन्य भाग में जुआ खेला जा रहा है। इस प्रकार, इस दृश्य का नियोजन होना चाहिए। और केन्द्र में बैठे भयावह कलि और उसकी भयानक रानी बात करेंगे कि, "अब हम खतरे में हैं। संकीर्तन आन्दोलन शुरू हो गया है। क्या

करना चाहिए?" इस तरह इस दृश्य का समापन करना है।

"इसके पश्चात् तीसरा दृश्य बहुत अच्छा है—रासनृत्य।"

हयग्रीव बीच में बोला। जिसे वह 'नाटकीय दृष्टिकोण' कहता था, उस विषय में उसके कुछ अपने निजी विचार थे। "मैं सोचता हूँ," हयग्रीव ने अपने शब्दों पर बल देते हुए कहा, "यह सारे संसार पर लागू होता है, इस अर्थ में कि नाम भारतीय हो सकते हैं, किन्तु कलि और उसकी सहधर्मिणी पाप की सभा, अवैध यौनाचार का प्रदर्शन एवं बूचड़खाना, ये सब पश्चिम के भी हो सकते हैं।"

श्रील प्रभुपाद बोले कि हयग्रीव ने जो कुछ कहा उस पर उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी, लेकिन वे लोगों को यह सोचने का मौका नहीं देना चाहते थे कि वे केवल पश्चिम के लोगों को ही दोषारोपण के लिए चुन रहे थे, मानो केवल वे ही अवैध यौनाचार करने वाले थे। हयग्रीव उत्तर देने ही वाला था, परन्तु उसने तय किया कि वह समय बाल की खाल उतारने का नहीं था। स्वामीजी भगवान् चैतन्य की लीलाओं का आगे वर्णन करने के लिए उत्सुक थे।

प्रभुपाद: "रासनृत्य का मतलब यह है कि कृष्ण और राधारानी बीच में है और गोपियाँ उन्हें घेरे खड़ी हैं। तुमने पार्क में वह दृश्य देखा था, जब वे हमारी चारों ओर घेरा बनाकर हाथ में हाथ डाले नाच रहे थे।"

हयग्रीव: "हाँ, हाँ।"

प्रमुपाद: "इस प्रकार एक कृष्ण और एक गोपी—दोनों नाचते हैं। दृश्य ऐसा होना चाहिए। तब रासनृत्य बन्द कर देना चाहिए और कृष्ण गोपियों से वार्तालाप करेंगे। कृष्ण गोपियों से कहेंगे, 'मेरी प्रिय सखियों, तुम इस आधी रात को मेरे पास आई हो। यह अच्छा नहीं है, क्योंकि हर स्त्री का कर्तव्य है कि वह अपने पति को प्रसन्न करे। इसलिए तुम्हारे पति क्या सोचेंगे, यदि तुम इस तरह आधी रात में यहाँ आओगी। तुम सब वापस जाओ।'

"तब गोपियाँ उत्तर देंगी कि 'आप हमें वापस जाने को नहीं कह सकते, क्योंकि बड़ी कठिनाई और उमंग के साथ हम आपके पास आई हैं। और आपका यह काम नहीं है कि हमें वापस जाने को कहें।' अतः इस तरह के वार्तालाप का आयोजन करो जिसमें कृष्ण गोपियों को वापस जाने को कह रहे हैं, किन्तु वे उनके साथ रहने का आग्रह करती हैं, 'नहीं, हमें अपना रासनृत्य करते रहने दीजिए।'

"रासनृत्य के समाप्त होने पर गोपियाँ चली जायेंगी और तब कृष्ण कहेंगे, 'ये गोपियाँ मेरा हृदय और आत्मा हैं। वे इतनी सच्ची भक्त हैं कि पारिवारिक बाधाओं और बदनामी की चिन्ता भी नहीं करतीं। वे मेरे पास आती हैं, अतः मैं इसका बदला कैसे चुकाऊँगा?' वे सोच रहे थे, 'मैं उनके भाव-पूर्ण प्रेम का बदला कैसे चुकाऊँगा? "अतएव उन्होंने

सोचा, 'मैं उनका बदला नहीं चुका सकता जब तक मैं अपने आपको समझने के लिए उनका स्थान न ले लूँ। किन्तु मैं स्वयं अपने आपको नहीं समझ सकता। मुझे गोपियों का स्थान लेना होगा कि वे मुझे कितना प्रेम करती हैं।'

"इसलिए उस विचार के साथ उन्होंने भगवान् चैतन्य का रूप धारण किया। इसलिए कृष्ण श्यामवर्ण के हैं और भगवान् चैतन्य का रंग गोपियों का है। भगवान् चैतन्य का पूरा जीवन कृष्ण के प्रति गोपियों के प्रेम का प्रतिनिधित्व करता है। इस दृश्य में इसी का चित्रण होना चाहिए। तुम्हें कुछ पूछना है?"

हयग्रीव : "तो यह कृष्ण का निश्चय है भगवान् चैतन्य के रूप में अवतार लेने का?"

प्रभुपाद : "भगवान् चैतन्य, हाँ।"

हयग्रीव : "इसलिए कि...?"

प्रभुपाद : "इसलिए कि वे गोपी के रूप में कृष्ण के प्रेम का आस्वादन कर सकें। ठीक उसी तरह जैसे मैं तुमसे व्यवहार करता हूँ। तुम्हारा अपना निजीपन है और मेरा अपना निजीपन है। यदि मैं यह समझना चाहूँ कि तुम मेरे प्रति इतने आज्ञाकारी और प्रेम रखने वाले कैसे हो, तो मुझे तुम्हारा स्थान लेना पड़ेगा। यह बहुत स्वाभाविक मनोविज्ञान है। तुम्हें ऐसा ही चित्रण करना है।"

प्रभुपाद ने एक के बाद दूसरी कहानी का वर्णन किया, जिनमें से अधिकतर हयग्रीव के लिए नई थीं। हयग्रीव नामों का ठीक से उच्चारण या उनकी वर्तनी भी नहीं जानता था। वह नहीं जानता था कि भगवान् चैतन्य की माता कौन थीं और नित्यानन्द भक्त थे या नहीं। और जब प्रभुपाद ने क्षीर-चोर गोपीनाथ श्रीविग्रह की कहानी बताई कि वे अपने भक्त के लिए दही चुराते थे, तो हयग्रीव सन्देह में पड़ गया और उसने सोचा कि प्रभुपाद ने बताया है कि भगवान् चैतन्य दही चुराते थे।

प्रभुपाद : "नहीं, ओह, तुमने सुना नहीं? श्रीविग्रह के दर्शन के बाद चैतन्य उनके निकट बैठे उनका अवलोकन कर रहे थे और उस बीच नित्यानन्द प्रभु ने उन्हें यह कहानी सुनाई कि कृष्ण का नाम क्षीर-चोर गोपीनाथ कैसे हुआ। तुमने समझा नहीं?"

हयग्रीव नित्यानन्द के बारे में सोचने लगा : "नित्यानन्द?"

प्रभुपाद : "नित्यानन्द भगवान् चैतन्य के साथ जा रहे थे।"

हयग्रीव : "नित्यानन्द यह कहानी भगवान् चैतन्य को सुना रहे थे?"

प्रभुपाद : "हाँ, श्रीविग्रह को क्षीर-चोर गोपीनाथ कहते थे। कहानी—प्रभुपाद ने तीसरी बार दुहराया—यह है कि उन्होंने अपने भक्त के लिए पहले एक मटका दही चुराया था।"

हयग्रीव : "तो इसका भगवान् चैतन्य से सीधा सम्बन्ध क्या है?"

प्रभुपाद : "भगवान् चैतन्य इस मन्दिर में दर्शन के लिए गए थे। उस समय बंगाल से जगन्नाथ पुरी जाने का वही मार्ग था। उस मार्ग पर क्षीर-चोर गोपीनाथ मन्दिर पड़ता था। इसलिए हर व्यक्ति उसमें जाता था। पहले, माधवेन्द्र पुरी भी वहाँ गए थे और कृष्ण ने उनके लिए दही चुराया था। उसी समय से वे क्षीर-चोर गोपीनाथ कहे जाने लगे। यह कहानी चैतन्य महाप्रभु को बताई गई थी। इसलिए कृष्ण के श्रीविग्रह के सामने बैठे महाप्रभु ने जब यह कहानी सुनी, तो उन्हें आनन्द आया कि भगवान् इतने दयालु हैं कि वे अपने भक्तों के लिए कभी कभी चोरी भी करते हैं। यही इस कहानी का महत्त्व है। अतः यहाँ दृश्य का नियोजन इस प्रकार होना चाहिए कि मन्दिर बहुत सुन्दर हो, उसमें श्रीविग्रह विराजमान हों और चैतन्य महाप्रभु हरे कृष्ण जपते हुए उनमें प्रविष्ट होते हों। तब वे आरती देखते हैं। ये ही वस्तुएँ इस दृश्य में दिखानी हैं। और उनके विषय में एक छोटी-सी कहानी। बस।"

जब प्रभुपाद ने साक्षी-गोपाल मन्दिर में चैतन्य के जाने के बारे में बताया तो हयग्रीव फिर उलझन में पड़ गया। "क्या समझ गए?" प्रभुपाद ने पूछा।

"नहीं," हयग्रीव बड़बड़ाया, "नहीं।"

अन्त में हयग्रीव ने बीच में बोलना और प्रश्न पूछना बन्द कर दिया। यद्यपि चरित्रों के व्यक्तित्व या महत्त्व के बारे में हयग्रीव का ज्ञान अल्प था, तथापि ज्योंही वह उनके बारे में थोड़ा सुन लेता, त्योंही "नाटकीय दृष्टिकोण" से वह उनके कार्यकलापों के समायोजन में दत्तचित्त हो जाता। प्रभुपाद ने हयग्रीव की जिज्ञासाओं के बारे में कोई आपत्ति नहीं की थी। वास्तव में उन्होंने प्रश्न पूछने के लिए उसे आमंत्रित किया था, जिससे वह समझ सके कि नाटक का अभिनय कैसे प्रस्तुत करना है। पर हयग्रीव ने निश्चय किया कि पहले वह प्रभुपाद जो कुछ कह रहे थे, उसे सुनेगा।

वार्तालाप के पहले घंटे के अन्त तक प्रभुपाद भगवान् चैतन्य के जीवन के आधे भाग तक के बहुत से दृश्यों के बारे में बता चुके थे : पाँच वर्ष की अवस्था में उनका गंगातट पर ब्राह्मणों को चिढ़ाना, मुसलमान मजिस्ट्रेट के विरुद्ध उनका सविनय अवज्ञा आन्दोलन, चौबीस वर्ष की अवस्था में उनका संन्यास-ग्रहण, ममतामयी माता से उनकी अन्तिम भेंट, उनकी पुरी-यात्रा और दक्षिण भारत का भ्रमण, सार्वभौम, रामानन्द राय, रूप गोस्वामी, सनातन गोस्वामी जैसे शिष्यों से उनकी भेंट और उन्हें उपदेश देना, आदि।

अन्त में सवेरे का कार्यक्रम ऐसा था कि प्रभुपाद और अधिक समय नहीं दे सके। उनके नहाने और खाने का समय हो गया था। दूसरे दिन फिर बैठने का निश्चय हुआ।

दूसरे सत्र में हयग्रीव प्रभुपाद की बात और अधिक ध्यान से सुनने लगा और एक के बाद एक दिव्य दृश्य शीघ्रतापूर्वक आने लगे। हर दृश्य का वर्णन करते समय प्रभुपाद

भगवान् चैतन्य और उनके सखाओं के शब्दों और विचारों का उल्लेख इस प्रकार करते थे, मानो वे दृश्य उनके सामने अभिनीत हो रहे हों। वे विशेष रूप से भावविभोर हो जाते थे, जब वे भगवान् चैतन्य और हरिदास ठाकुर के बारे में बताते थे।

"हरिदास ठाकुर का जीवन" प्रभुपाद ने बताया, "यह है कि उनका जन्म एक मुसलमान परिवार में हुआ था। किसी तरह वे भक्त बन गए और हर दिन तीन लाख बार जप करने लगे : 'हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे। हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे॥' और चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें आचार्य का पद दिया, जिसका अर्थ है हरे कृष्ण जपने का अधिकारी। इसलिए हम "नामाचार्य हरिदास ठाकुर की जय' कहकर उनकी जय मनाते हैं—क्योंकि वे आचार्य बना दिए गए थे—हरे कृष्ण जपने के अधिकारी।

"जब चैतन्य महाप्रभु ने संन्यास लिया, तब हरिदास ठाकुर ने निश्चय किया, "मेरे प्रिय स्वामी, आप नवद्वीप छोड़ रहे हैं। अब मेरे जीने से क्या लाभ? या तो मुझे साथ ले चलिए या प्राण त्यागने दीजिए।"

इसलिए चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "नहीं, तुम मरोगे क्यों? तुम मेरे साथ चलो।" अतः वे उन्हें जगन्नाथ पुरी ले गए। जगन्नाथ पुरी में हरिदास मन्दिर में नहीं गए, क्योंकि वे अपने आपको मुसलमान परिवार में पैदा हुआ मानते थे। किन्तु चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें काशिनाथ मिश्र के घर ठहराया। वहाँ वे कीर्तन करते थे और चैतन्य महाप्रभु उन्हें प्रसाद भेजते थे। इस तरह वे अपना समय बिताते थे और चैतन्य महाप्रभु उनसे मिलने नित्य आते थे।"

श्रील प्रभुपाद हरिदास के निधन का एक दृश्य चाहते थे।

हयग्रीव : "क्या ये वही हरिदास हैं, जिन्हें मुसलमानों ने नदी में फेंक दिया था?"

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा।

तब अनायास विचारमग्न होते हुए हयग्रीव बोला, "तो, वे पाँचवें दृश्य में मृत्यु को प्राप्त हुए?"

प्रभुपाद हिचके। हयग्रीव ने यहाँ फिर दिव्य ज्ञान का अभाव प्रकट किया। वह इस तरह बात कर रहा था, मानो हरिदास का देहान्त एक सामान्य व्यक्ति की मृत्यु हो।

"बहुत अच्छा," हयग्रीव ने संकेत किया, "यह विशेष घटना कौन-सी है?"

प्रभुपाद : वह विशेष घटना महत्त्वपूर्ण है। चैतन्य महाप्रभु ब्राह्मण थे और वे संन्यासी हो गए थे। सामाजिक प्रथानुसार उन्हें एक मुसलमान का स्पर्श भी नहीं करना चाहिए था। किन्तु ये हरिदास ठाकुर एक मुसलमान थे, तो भी उनका देहान्त होने पर चैतन्य महाप्रभु उनका शव उठाकर ले गए और उन्होंने नृत्य किया। उन्होंने उन्हें दफनाया और प्रसाद का वितरण किया।

"चूँकि हरिदास ठाकुर एक मुसलमान थे, इसलिए वे मन्दिर में नहीं गए, क्योंकि इस

विषय में हिन्दू बहुत नियमनिष्ठ थे। हरिदास एक भक्त थे, पर उन्होंने सोचा, 'मैं उपद्रव क्यों खड़ा करूँ?' अतएव चैतन्य महाप्रभु उनके विनम्र व्यवहार से बहुत प्रभावित हुए। यद्यपि वे भक्त बन गए थे, किन्तु वे जबर्दस्ती मन्दिर में नहीं जाते थे। पर चैतन्य महाप्रभु नित्य आते थे और उनसे मिलते थे। सागर में स्नान करने जाते समय वे पहले हरिदास से मिलते थे : 'हरिदास, तुम क्या कर रहे हो?' हरिदास उन्हें प्रणाम करते और वे उनके साथ बैठकर कुछ देर बात करते थे। तब वे जाते और स्नान करते थे।

"इस प्रकार जब वे एक दिन आए, तो देखा कि हरिदास की तबियत ठीक नहीं थी : उन्होंने पूछा 'हरिदास, तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है?"

"हाँ, प्रभु, यह बहुत... नहीं है। आखिर, यह शरीर ही तो है।"

"तब तीसरे दिन महाप्रभु चैतन्य ने देखा कि हरिदास अपने शरीर का त्याग करने जा रहे थे। अत: उन्होंने पूछा, "हरिदास, तुम क्या चाहते हो?' वे दोनों समझ रहे थे। हरिदास बोले, 'यह मेरी अन्तिम अवस्था है, यदि आप कृपापूर्वक मेरे सामने खड़े हो जाँए...'

श्रील प्रभुपाद उस दृश्य के तीव्र आध्यात्मिक संवेग में डूब गए, मानो वह घटना उनके सामने घटित हो रही हो। उन्होंने अपने नेत्र बन्द कर लिए : "ममम।" उनका बोलना बन्द हो गया। तब रुक-रुककर धीरे-धीरे उन्होंने फिर शुरु किया, "तो, चैतन्य महाप्रभु उनके सामने खड़े हो गए... और उन्होंने अपने शरीर का त्याग कर दिया।" प्रभुपाद ने दुख की सांस ली और वे मौन हो गए। हयग्रीव फर्श की ओर देखता बैठा रहा। जब उसने ऊपर नजर की तो उसने देखा कि स्वामीजी रो रहे थे।

प्रभुपाद ने अन्तिम दृश्यों का संक्षेप-सार शीघ्रता में दिया और नाटक की रूपरेखा समाप्त कर दी। "अब तुम लिखो," हयग्रीव से उन्होंने कहा, "और मैं उसमें कुछ जोड़ूँगा या परिवर्तन करूँगा। यह रूपरेखा और ढाँचा है। अब तुम आगे चल सकते हो।" हयग्रीव कमरे से चला गया। सामग्री विशाल थी और इसमें सन्देह था कि वह नाटक लिख पाएगा या नहीं। किन्तु वह अनुगृहीत था कि उसे ऐसा भाषण सुनने को मिला।

• • •

प्रभुपाद स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के छात्र-विश्राम कक्ष में एक ब्रिज टेबल के सामने बैठे कीर्तन आरम्भ कर रहे थे। वे एक छोटे से माइक्रोफोन में मंत्र बोल रहे थे, जबकि उनके अनुयायी वाद्य-यंत्र बजा रहे थे। शुरू में वहाँ लगभग बीस छात्र थे, पर धीरे-धीरे विश्राम-कक्ष में और छात्र आकर जमा होते गए। हर एक कीर्तन कर रहा था। तब एकाएक कक्ष का रूप बदल गया, जब दो सौ से अधिक छात्र, जो हरे कृष्ण मंत्र के लिए बिल्कुल नए थे, नाचने और कीर्तन करने लगे। उनका उत्साह हैट ऐशबरी की अनिरोधित

भीड़ के समान अबाध था। प्रभुपाद ने एक घंटे से अधिक समय तक कीर्तन चलाया।

बाद में अपने व्याख्यान में उन्होंने वह बताया जिसका कीर्तनियों ने अभी थोड़ी देर पहले अनुभव किया था, "यह हरे कृष्ण नृत्य इस भ्रम से मुक्ति पाने का सबसे अच्छा तरीका है कि 'मैं यह शरीर हूँ।' हमारा संघ संसार में परम-ईश्वर का यह अमूल्य उपहार बाँट रहा है। आपकी समझ में शब्द नहीं आए, किन्तु नृत्य में जो भावविभोरता है, उसका अनुभव आपने किया।"

प्रभुपाद ने श्रोताओं से प्रश्न आमंत्रित किए। हर वस्तु मानक स्तर पर चल रही थी। तब किसी ने पूछा कि क्या कालेज के विद्यार्थियों को सेना में अनिवार्य भरती को स्वीकार करना चाहिए। प्रभुपाद ने उत्तर दिया कि चूँकि अपनी सरकार का निर्वाचन उन्होंने स्वयं किया था, इसलिए यदि सरकार उन्हें युद्ध में भेजती हो, तो उन्हें शिकायत नहीं होनी चाहिए। लेकिन कुछ विद्यार्थियों ने, जिनमें से कुछ ने अभी कुछ ही मिनट पहले कीर्तन और नृत्य में भाग लिया था, चिल्लाना शुरू किया कि, "नहीं, नहीं," प्रभुपाद ने अपनी बात को स्पष्ट करना चाहा, लेकिन क्रोध में विद्यार्थी अपनी आवाज ऊँची करते गए जब तक कि हाल पागलखाना जैसा नहीं बन गया। अन्त में प्रभुपाद ने अपने करताल उठा लिए और फिर कीर्तन आरम्भ कर दिया और विरोधी लोग कमरा छोड़कर चले गए।

दूसरे दिन 'पालो आल्टो टाइम्स' में मुख-पृष्ठ पर कीर्तन के चित्र के साथ मोटे अक्षरों में समाचार प्रकाशित हुआ।

प्राचीन भाव-समाधि नृत्य वाले स्वामी के स्टेनफोर्ड आगमन का वैशिष्ट्य

> आप वहाँ एक मिनट रुकिए, वहाँ के लोगों में घुलमिल जायेंगे। एक नया नृत्य देश को आप्लावित कर देने वाला है। उसे 'स्वामी' नृत्य कहते हैं।
>
> यह फ्रग, वतूसी, स्विम और लोकप्रिय पुराने नृत्य बार्न स्टोम्प को भी अपदस्थ करने जा रहा है।
>
> क्यों? क्योंकि इसमें, आपका पग-विन्यास कितना भी पुराना हो, आपको वास्तविक आनन्द आएगा। आप अपने आपको इस भ्रम से मुक्त कर सकते हैं कि आप और आपका शरीर अभिन्न हैं।
>
> कीर्तन का आरम्भ गुमसुम ढंग से हुआ, किन्तु ज्यों-ज्यों लोगों की संख्या बढ़ती गई, यह प्रबल होता गया।
>
> आधे घंटे के बाद एक लम्बे बालों वाला युवक, जो गले में लाल मनकों की तीन लड़ी वाली माला पहने था, खड़ा हुआ और संगीत की लय के साथ नाचने लगा। उसने भावविभोर होकर अपने नेत्र बन्द कर लिए और हथेलियाँ कंधों से

ऊपर उठा लीं।

दो लड़कियाँ शीघ्र उसका अनुगमन करने लगीं। एक के गले में घंटियों की माला थी।

एक दाढ़ीवाला व्यक्ति, जिसके सिर पर चकमदार पीली टोपी थी, तम्बूरा बजाता हुआ, नृत्य में शामिल हो गया।

स्वामी सामने रखे माइक्रोफोन में मंत्र बोलने लगे। ध्वनि में वृद्धि होने से और लोग भी प्रेरित हुए और वे कीर्तन में शामिल होकर जोर से स्टोम्प नृत्य करने लगे।

साड़ी पहने हुए एक सुन्दर लड़की इस तरह नृत्य करने लगी, मानो वह सम्मोहक भाव-समाधि में हो।

सूट और टाई पहने हुए काले रंग का एक ठिगना व्यक्ति अपने जूते उतारकर कीर्तन में शामिल हो गया। गणित के एक प्राध्यापक ने भी वैसा ही किया। एक तीन साल की सुन्दर गोरी लड़की कोने में बैठी झूम रही थी।

अकस्मात एकत्रित लोगों में से अधिकतर नृत्य और कीर्तन करने लगे। उनकी गति तीव्र से तीव्रतर होती गई। चेहरों से पसीने की धारा बह निकली; तापमान बढ़ गया।

तब कीर्तन बन्द हो गया।

श्रील प्रभुपाद इस लेख से बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उसकी कई फोटो-प्रतियों की माँग की। "वे नृत्य को क्या कह रहे हैं ?" स्वामीजी हँस पड़े, "स्वामी ?" कीर्तन के चित्र के आरपार उन्होंने टाइप किया, "जब स्वामी भक्तिवेदान्त अपने सम्मोहक हरे कृष्ण का गान करते हैं, तो हर एक पूर्णतः भावविभोर होकर उस में सम्मिलित होता है।"

भक्तों ने प्रभुपाद का एक कार्यक्रम वाई.एम.सी.ए. में निश्चित किया, जहाँ लगभग सभी श्रोता बच्चे थे। भक्तों ने कृष्ण के पोस्टरों से हालको भलीभाँति सजाया था और एक विशाल सूचना-पट पर महा-मंत्र लिखकर उसे टाँग दिया था। कीर्तन में बच्चों ने प्रभुपाद का साथ दिया। व्याख्यान के ठीक पहले गुरुदास ने प्रभुपाद को याद दिलाया, "व्याख्यान सरल होना चाहिए, क्योंकि सभी बच्चे नौ से चौदह वर्ष की अवस्था के हैं।" प्रभुपाद ने मौन-भाव से सिर हिलाया।

"क्या यहाँ कोई कुशाग्र बुद्धि बालक है ?" प्रभुपाद ने आरम्भ किया। किसी ने उत्तर नहीं दिया। एक क्षण के बाद एक बारह वर्ष के बालक ने, अपने अध्यापकों और सहपाठियों से प्रेरित किए जाने पर अपना हाथ उठाया। प्रभुपाद ने उसे आगे आने का संकेत दिया। लड़का मोटा चश्मा, हाफ पैंट्स और ब्लेजर पहने था। उसके बालों में पीछे

की ओर बहुत सफाई से कंघी की गई थी। लड़के के सिर की ओर संकेत करते हुए स्वामीजी ने पूछा, "यह क्या है?"

लड़का प्रश्न की सरलता पर करीब-करीब हँस पड़ा, "मेरा सिर!"

प्रभुपाद ने तब लड़के की बाँह की ओर इशारा किया और शान्त भाव से पूछा, "वह क्या है?"

"मेरी बांह," लड़के ने कहा।

प्रभुपाद ने तब लड़के के पैर की ओर इशारा किया, "वह क्या है?"

"मेरा पैर," लड़के ने उत्तर दिया, अविश्वास की मुद्रा के साथ।

"हाँ," प्रभुपाद ने कहा, "तुम कहते हो, यह मेरा सिर है, मेरी बांह है, मेरा पैर है, मेरा शरीर है। किन्तु तुम कहाँ हो? लड़का घबराया-सा खड़ा रहा। वह प्रभुपाद के सीधे-सादे प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ था।

"हम कहते हैं 'मेरा हाथ,'" प्रभुपाद ने जारी रखा, "किन्तु मेरे हाथ का स्वामी कौन है? हम कहते हैं 'मेरा हाथ,' इसलिए इसका तात्पर्य यह है कि 'मेरे' हाथ का कोई स्वामी है। किन्तु वह स्वामी रहता कहाँ है? मैं नहीं कहता कि 'मैं हाथ,' मैं कहता हूँ, 'मेरा हाथ,' इसलिए 'मेरा हाथ' और 'मैं' भिन्न-भिन्न हैं। मैं अपने शरीर में हूँ और तुम अपने शरीर में हो। लेकिन मैं मेरा शरीर नहीं हूँ और तुम तुम्हारा शरीर नहीं हो। हम शरीर से भिन्न हैं। वास्तविक बुद्धि यह जानने में है कि 'मैं कौन हूँ?'"

• • •

हैट ऐशबरी की साईकिडेलिक दुकान से, जो हिप्पियों के इकठ्ठे होने का आम स्थान था, प्रभुपाद को वहाँ जाकर भाषण देने का कई बार आमंत्रण मिल चुका था। मंत्र-राक-डांस के बाद हिप्पियों ने वहाँ खिड़की में एक सूचना लगा दी थी : चेतना की रात। मंत्र-राक-डांस के प्रत्युत्तर में उन्होंने स्टोर के पिछले भाग में एक ध्यान-कक्ष भी स्थापित किया था। किन्तु चूँकि साइकिडेलिक दुकान के हिप्पी प्रायः हर समय नशे में धुत रहते थे, इसलिए प्रभुपाद के अनुयायियों ने कहा था कि प्रभुपाद का वहाँ जाना ठीक नहीं होगा। लेकिन हिप्पी प्रार्थना करते रहे। अन्त में प्रभुपाद के भक्त राजी हो गए और प्रभुपाद को राय दी गई कि उनका वहाँ जाना ठीक होगा।

इसलिए शनिवार की एक रात को प्रभुपाद और उनके दो शिष्य हैट स्ट्रीट में साइकिडेलिक दुकान में जा पहुँचे। युवाजनों से सड़कें भरी थीं : हिप्पी फुटपाथों पर बैठे चरस, भांग और अन्य मादक दवाएँ बेच रहे थे; समलिंगकामी, विचित्र भेष बनाए चेहरों को रंगे हिप्पी; मारिजुआना का कश लगाते, मदिरा का पान करते, गाते, गिटार बजाते

छोटे-छोटे समूह—हैट ऐशबरी का एक आम सांध्य दृश्य।

साइकिडेलिक दुकान की हवा मारिजुआना और तम्बाकू के धुएँ से भारी हो रही थी, उसमें शराब और लोगों के शरीरों से निकलती गंध मिली थी। प्रभुपाद ध्यान-कक्ष में प्रविष्ट हुए और बैठ गए। उसकी दीवारें और भीतरी छत मद्रासी कपड़ों से आच्छादित थीं। कक्ष हिप्पियों से भरा था, अधिकतर लेटे हुए थे, वे नशे में धुत थे और अधखुली आँखों से प्रभुपाद को देख रहे थे। प्रभुपाद धीमी गति में बोले, परन्तु उनकी ओर हिप्पियों का ध्यान केन्द्रित था। यद्यपि वे निश्चेष्ट पड़े थे, किन्तु स्वामीजी का भाषण उन्हें पसन्द आया। और जब स्वामीजी भाषण समाप्त कर चुके, तो हिप्पियों में से जो होश में थे, उन्होंने स्वामीजी से अपनी सहमति व्यक्त की।

• • •

सैन फ्रांसिस्को में अपने अधिवास के अन्त के निकट पहली अप्रैल शनिवार को, प्रभुपाद ने मार्निंग स्टार रैंच नामक नग्नवादी हिप्पी समुदाय के अध्यक्ष लाउ गाटलिब का आमंत्रण स्वीकार किया। भक्तों ने प्रभुपाद को बताया कि मार्निंग स्टार नवयुवकों का एक समुदाय था, जो जंगलों में रहता था। वहाँ के हिप्पी आध्यात्मिक आकांक्षाएँ रखते थे। वे शाक-भाजी उगाते थे और सूर्य की उपासना करते थे। वे हाथ जोड़कर वायु-ध्वनि सुनते थे। और स्वभावतः वे खूब नशा और स्वतंत्र यौनाचार करते थे।

जब लाउ सवेरे स्वामीजी को लेने आया, तो दोनों में वार्ता हुई और प्रभुपाद ने उसे एक रसगुल्ला दिया। प्रभुपाद के कमरे में कुछ मिनट साथ बिता लेने के बाद वे मार्निंग स्टार के लिए चले, जो सैन फ्रांसिस्को से साठ मील उत्तर की ओर था।

लाउ गाटलिब : *मैंने स्वामीजी से कार में सुरक्षा-पट्टी कसकर बाँध लेने को कहा। उन्होंने कहा—नहीं। कृष्ण इसकी सँभाल करेंगे, या इसी तरह की कोई बात उन्होंने कही। तो, मार्ग में मैं रामकृष्ण का जीवन-चरित पढ़ रखने के अपने सारे पांडित्य का प्रदर्शन कर रहा था। तब भक्तिवेदान्त ने मुझे वह सर्वश्रेष्ठ उपदेश दिया, जो किसी आकांक्षी ने कभी भी न सुना हो। हम रामकृष्ण, विवेकानन्द, अरबिन्दो के बारे में और इधर-उधर की बातें कर रहे थे। उन्होंने कहा, "तुम जानते हो," मेरे घुटने पर नरमी से हाथ रखते हुए, "जब तुमने अपना सही मार्ग पा लिया हो, तो धर्मों की तुलना के विषय में आगे और अधिक खोज केवल इन्द्रिय-सुख रह जाता है।"*

दो सौ फुट से अधिक ऊँचे रेडवुड वृक्षों के जंगल में मार्निंग स्टार रेंच जहाँ स्थित था, वहाँ पहले एक मुर्गी-पालन केन्द्र हुआ करता था। कुछ जमीन खेती के लिए साफ कर दी गई थी। मार्निंग स्टार में कुछ टेंट लगे थे, कुछ नगण्य छोटी झोपड़ियाँ थीं, वृक्षों में एक-

दो आवास थे, किन्तु अच्छा सुरक्षित मकान केवल लाउ का था, जो पहले एक पुराना मुर्गी घर रहा था। मार्निंग स्टार की समाज में लगभग एक सौ सार्वकालीन सदस्य थे। गरमी के सप्ताहान्त दिनों में सदस्य-संख्या बढ़कर तीन सौ तक हो जाती थी, जब लोग बगीचे में काम करने आते थे, या केवल मस्ती में वहाँ नग्न घूमने के लिए पहुँचते थे और नशे में धुत हो जाते थे।

प्रभुपाद एक सुन्दर धूप वाले दिन तीसरे पहर एक बजे वहाँ पहुँचे। पहले वे विश्राम करना चाहते थे, इसलिए लाउ उन्हें अपने घर में ले गया। लाउ के घर में जाते समय प्रभुपाद ने कुछ नग्न स्त्री-पुरुषों को बगीचे में कुदाल चलाते देखा। एक छोटा, गोल-मटोल नौजवान, जिसका नाम हर्बी ब्रेसक था, बगीचे में अपना काम बन्द करके स्वामीजी को नमस्कार करने आया।

हर्बी : *लाउ गाटलिब ने हमारा परिचय कराया। उस समय हम आलू बो रहे थे। उसने कहा, "ये स्वामी भक्तिवेदान्त हैं।" मैं बगीचे से बाहर आ गया और स्वामीजी से हाथ मिलाते हुए बोला, "हलो स्वामी," उन्होंने पूछा, "तुम क्या कर रहे हो?" मैंने उत्तर दिया, "मैं अभी आलू बो रहा था। उन्होंने तब मुझसे पूछा कि मैं अपने जीवन के साथ क्या कर रहा था। मैंने कोई उत्तर नहीं दिया।*

कुछ मिनट विश्राम करने के बाद प्रभुपाद कीर्तन के लिए तैयार हो गए। वे और लाउ घास के एक पहाड़ी मैदान में गए, जहाँ हिप्पियों ने जंगली फूलों के एक लता-मंडप के सामने उनके बैठने के लिए लकड़ी का एक आसन रख दिया था। प्रभुपाद बैठ गए और उन्होंने कीर्तन आरम्भ कर दिया। समाज के सभी सदस्य जो स्वामीजी के आगमन की प्रत्याशा में थे, उत्सुकता पूर्ण सामूहिक ध्यान के लिए वहाँ इकट्ठे हो गए।

माइक मोरिसी : *कुछ लोग वस्त्र पहने हुए थे, कुछ नहीं पहने थे। कुछ नाच रहे थे। किन्तु स्वामीजी हमारे शरीरों को नहीं देख रहे थे। वे हमारी आत्माओं को देख रहे थे और उस कृपा की वर्षा कर रहे थे, जिसकी हमें जरूरत थी।*

कीर्तन का अच्छा स्वागत हुआ। समाज का एक सदस्य इतना मोहित हो गया कि उसने कपड़े पहनने का और स्वामीजी के साथ सैन फ्रांसिस्को जाने का निर्णय ले लिया। प्रभुपाद बहुत संक्षेप में बोले और तब वे जाने को तैयार हो गए। कार में बैठने के पहले उन्होंने लोगों से हाथ मिलाया और धन्यवाद दिया।

यद्यपि प्रभुपाद ने दर्शन की अधिक बातें नहीं कीं, लेकिन उनके कीर्तन का मार्निंग स्टार के हिप्पियों पर गहरा असर हुआ। वहाँ से जाते समय उन्होंने एक युवक से कहा था, "इस हरे कृष्ण मंत्र का जप यहाँ करते रहना।" और वे सब करते रहे।

लाउ गाटलिब : *स्वामी एक बहुत कुशलबुद्धि व्यक्ति थे, जिन्हें एक उद्देश्य की पूर्ति*

करनी थी। वे धर्म-ध्वज या पवित्र पुरुष होने का दावा नहीं करते थे, आकाश की ओर आँखें करके शान्त बैठे रहने का उनका उपदेश नहीं था। मुझे जितना कुछ याद है, वह बहुत सुखद, अविश्वसनीय रूप से सुरक्षित भाव का स्मरण है। इसमें सन्देह नहीं कि एक बार आप अपने मन में महामंत्र पहुँचा दें तो वह वहाँ स्थायी हो जाता है। वह कभी बंद नहीं हो सकता। वह रग-रग में मिल जाता है। वह डी.एन.ए. या इस तरह की किसी चीज को जाग्रत कर देता है। इसलिए शीघ्र ही मार्निंग स्टार के आधे लोग गंभीरता से कीर्तन में लग गए। जो उसमें लगे वे वास्तव में भगवान् के खोजी थे। उनकी आकांक्षा हजार प्रतिशत सच्ची थी, यदि हम उन परिस्थितियों पर विचार करें, जिनमें वे रह रहे थे। वे सभी नशा करने वाले थे, यह निश्चित है, लेकिन महामंत्र के साहचर्य में आते ही उन्होंने उसका त्याग कर दिया था।

• • •

प्रभुपाद का दुपट्टा कंधों पर ढीला लिपटा था। वे स्टोरफ्रंट मन्दिर से और अपने भक्तों से अन्तिम विदा लेने के लिए अपनी कार के खुले दरवाजे के सामने खड़े थे। अब वह केवल स्टोरफ्रंट नहीं रह गया, वरन् कोई सम्मान्य स्थान बन गया था : नई जगन्नाथ पुरी। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने प्रभुपाद को यहाँ आने के लिए कहा था। उनके गुरुभाइयों में कौन कल्पना कर सकता था कि ये अमरीकी हिप्पी कितने सनकी थे—मादक दवाओं की तरंगों में बहते हुए और यह चिल्लाते हुए कि, "मैं ईश्वर हूँ।" यहाँ कितनी लड़कियाँ और लड़के हैं, जो धन और शिक्षा के बावजूद दुखी हैं, पागल हैं। किन्तु अब कृष्णभावनामृत के माध्यम से कुछ को आनन्द की प्राप्ति हो रही थी।

जब वे यहाँ आए थे, तो पहले ही दिन संवाददाता ने पूछा था कि वे हैट ऐशबरी क्यों आए हैं। "क्योंकि किराया सस्ता है," उन्होंने उत्तर दिया था। उनकी इच्छा भगवान् चैतन्य के आन्दोलन का प्रसार करना था, अन्यथा वे इतने जीर्ण-शीर्ण छोटे-से स्टोरफ्रंट में रहने के लिए क्यों आते, जिसकी बगल में एक चीनी लांड्री और डिगर्स फ्री स्टोर थे? संवाददाता ने पूछा था कि क्या वे हिप्पियों और बोहिमियनों को कृष्णभावनामृत स्वीकार करने के लिए आमंत्रित कर रहे थे। "हाँ," उन्होंने कहा था, "हर एक को," किन्तु वे जानते थे कि एक बार उनके पास आ जाने के बाद उनके अनुयायी पहले से बिल्कुल भिन्न हो जायेंगे।

अब भक्तों का एक परिवार बन गया था। यदि वे उनका आदेश मानते रहेंगे, तो वे बलशाली बने रहेंगे। यदि वे सच्चे हैं, तो कृष्ण उनकी सहायता करेंगे। भगवान् जगन्नाथ वहाँ हैं और भक्तों को सच्ची लगन से उनकी आराधना करनी है। हरे कृष्ण का जप करने

और अपने आध्यात्मिक गुरु के आदेशों का पालन करने से उनका शुद्धीकरण हो जायेगा।

प्रभुपाद, कुछ भक्तों के साथ कार में बैठे और एक भक्त उन्हें हवाई अड्डा ले गया। कई कारों में भरकर अन्य भक्त उनके बाद पहुँचे।

हवाई अड्डे पर भक्त रो रहे थे। किन्तु प्रभुपाद ने उनको विश्वास दिलाया कि उन्होंने रथयात्रा उत्सव मनाया तो वे वापस आएँगे। "मुख्य सड़क से निकलने वाले एक जुलूस का आयोजन करना है," उन्होंने कहा। "इसे खूब अच्छी तरह करना। हमें बहुत-से लोगों को आकृष्ट करना है। जगन्नाथ पुरी में ऐसा जुलूस प्रति वर्ष निकलता है। उस समय श्रीविग्रह को मन्दिर से बाहर ले जाया जा सकता है।"

वे जानते थे कि उन्हें वापस आना है, भक्ति के उन कोमल पौधों को पोषण देने के लिए, जो उन्होंने लोगों के हृदयों में लगाए थे। नहीं तो भला ये कोमल नए पौधे भौतिक इच्छाओं के सागर में, जिसका नाम हैट ऐशबरी था, कैसे बचे रहेंगे? बार बार उन्होंने विश्वास दिलाया कि वे वापस आएँगे। उन्होंने मुकुंद, श्यामसुन्दर, गुरुदास, जयानन्द, सुबल, गौरसुन्दर, हयग्रीव, हरिदास और सब लड़कियों से आपस में सहयोग बनाए रखने को कहा।

केवल ढाई महीने हुए वे इस हवाई अड्डे पर पहुँचे थे। तब कीर्तन करते युवकों की भीड़ ने उनका स्वागत किया था। उनमें से बहुत से अब उनके शिष्य थे, यद्यपि वे केवल नाम को और शपथ-भर को आध्यात्मिक थे। उन्हें छोड़ने में प्रभुपाद को कोई खेद नहीं था। वे जानते थे कि कुछ विरत हो जायेंगे, लेकिन वे उनके साथ हमेशा तो नहीं रह सकते थे। उनका समय सीमित था।

श्रील प्रभुपाद, जो नौसिखियों के दो छोटे समुदायों के पिता थे, एक समुदाय को सदयता के साथ छोड़कर पूर्व के लिए प्रस्थान कर रहे थे, जहाँ दूसरा समुदाय एक भिन्न मनोभाव के साथ उनकी प्रतीक्षा कर रहा था, अभिवादन के प्रसन्न मनोभाव के साथ।